पांच नाम की व्याख्या

ले० परमसंत परमदयाल पं फकीरचन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर, होशियारपुर (पंजाब)

स० सम्पादक–
देवीचरन मीत्तल
लेखराज नगर, अलीगढ़

सम्पादक, प्रकाशक–
नन्दू भाई
शिव साहित्य प्रकाशन
दयाल नगर, अलीगढ़

सर्वाधिकार सुरक्षित

विषय - सूची

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ
1	भूमिका	1
2	पांच नाम की व्याख्या	12–24
3	शब्द स्थान दूसरा	25–36
4	शब्द स्थान तीसरा	37–48
5	शब्द स्थान चौथा	49–59
6	शब्द स्थान पांचवां	6–71

भूमिका

(ले० परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज)

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता, ज्ञान के भंडार से।
सहज छुटकारा मिले सब को कठिन संसार से।।
कहने को तो बन्ध मुक्ति, कल्पना मन की सही।
बिन दया सतगुरु वह, मिटती नहीं है जीते जी।।
नाम का दे आसरा, चरणों में अपने लीजिये।
शब्द की महिमा बताकर, पार भव से कीजिये।
सच्चिदानन्दम्, अखंडम्, केवलम् निज रूप हो।
निज दयासे जाये, दुखदाई महा भव कूप खो।।
आपका है आसरा और आपका विश्वास है।
राधास्वामी तार दे, अब आप ही की आस है।।

जीवन में चेतनता आई। किसी वस्तु की खोज हुई। मौज आधीन या मेरे कर्म समझ लो, दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरण कमल में सन १९०५ में गया। उन्होंने जीवन का संघर्ष, वासना, दुख या भ्रम को दूर करने को राधास्वामी मत की शिक्षा के आधार पर नाम दान दिया। चूंकि इस मत की वाणियों में सब मत मतान्तरों का खंडन था, मैंने प्रण किया था कि इस रास्ते पर चलूंगा और जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह बता जाऊँगा। जो कुछ समझा बहुत कुछ कहा। शरह हिदायतनामा सुरत सम्वाद, माया संवाद, बारहमासा लिखे और यह पाँच सत्संग पांच स्थानों के आधार पर दिये हैं जो 'सार वचन पद्य' में लिखे हुए हैं। मुझे कोई दावा नहीं। मैंने क्रियात्मकरूप से किसी वस्तु की खोज में कोशिश की है। उसको मालिक की खोज कह लो, परम ज्ञान परम सुख, परम शान्ति कह लो। मैं किसी संत की हाँ में हां नहीं मिलाता। मैं हर बात को अमली पहलू से देखता हूँ।

तुम देखते हो जब कोई दुर्घटना हो जाती है तो बहुत से दौड़े आते हैं। अपनी प्रकृति के अनुसार कोई मृतकों की जेबों से माल निकालते हैं कोई घायलों

की मरहम पट्टी करता है। भारत के विभाजन के समय बड़े सेवक कहलाने वालों ने मुसलमानों का सामान चुराया। ऐसे ही पाकिस्तान से जो हिन्दू यहां आये उनका सामान मुसलमानों ने लूटा। घरेलू व्यवहार में देखो कि यदि कोई कमजोर या मोटी बुद्धि वाला किसी बलवान के हाथ आ जाता है तो वह चालाकी से अनेक प्रकार से उसकी सम्पति या जायदाद को लूटना चाहता है। कई ऐसे हैं जो सहानुभूति करते हैं। भारत के विभाजन के समय भी ऐसा हुआ कि कई हिन्दुओं ने अपनी जान पर खेल कर मुसलमान मित्रों की जान बचाई या मुसलमानों ने हिन्दुओं की जान बचाई। ऐसे ही यहां जब कोई किसी दुखी को देखता है तो उसकी धन से, दवा से सहायता करता है। कोई कष्ट देने वाले को मारते हैं, पकड़ते हैं। कोई ऐसी बुद्धि वाले होते है जो यह सोचते हैं कि ऐसी घटना फिर न हो। यह संसार द्वन्द स्थल है त्रिगुणात्मक जगत है। इसमें दुख भी है और सुख भी है। मृत्यु भी है जीवन भी है। दुर्घटनाओं का होना भी है। देश तबाह होते रहते हैं। यह सन्त जन जो है यह वह महापुरुष है जिन्होंने यह सोचा कि झगड़ा ही न रहे। राधास्वामी मत, कबीर मत या हिन्दुओं के वेदशास्त्र इलाज बताते है। क्या? न रहे बांस न बजे बांसुरी। संतों का मार्ग निवृति मार्ग है। यह केवल उन महापुरुषों के दिमाग की उपज है। जो वस्तु हमारे अन्तर शरीर में रहती हुई शरीर के दुख सुखों का भान करती है, जो मन में रहती हुई मन के बुरे या अच्छे भाव विचारों का भान करती है, जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है, शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है और शब्द की साक्षी है, उन्होंने उस चीज को जो दुख-सुख महसूस करती है, उसको संसार से निकल जाने का उपाय बताया है, वह उपाय इन पांच सत्संगों में वर्णन किया है। आज का शब्द है-

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता, ज्ञान के भंडार से।
सह छुटकारा मिले, सबको कठिन संसार से।।

क्या यह संसार कठिन नहीं है? जबरदस्त मारे और रोने न दे। यहां वह दशा है। बड़े-बड़े सन्तों की मैंने दशा देखी। पलटूसाहब को दूसरे साधुओं ने जीवित को तेल के खौलते कढ़ाव में डाल दिया तो यह ज्ञान तो मिल गया कि सुरत को अपने अन्तर ले जाकर पिंड अंड और ब्रह्मण्ड से परे ले जाओ। मैं ले जाता हूँ,

उस अवस्था में रहता हूँ मगर शब्द से आगे मैं अभी जा नहीं सकता। फिर भी इस शब्द में कोई दुख नहीं मगर २४ घण्टे तो मुझसे वहां रहा नहीं जाता।

तो यह ब्रह्म प्रभाव सन्तों पर भी पड़ते हैं। साधु महात्माओं और दुनियादारों पर भी पड़ते हैं। भक्तों को कितना – कितना कष्ट दिया गया। नामदेव का सिर किसी मुसलमान बादशाह ने मरी हुई गाय के बीच में दे दिया। क्या इसका कोई उपाय है?

जब तक शरीर है इसमें रहते हुए अभ्यास करो। शब्द में चले जाओ। यह है थ्योरी (कल्पना) मैं शब्दों में जाता हूँ। फिर लौट के आऊँ या न आऊँ इसका मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है। मेरा अनुभव बताता है कि यदि अन्त समय में किसी की सुरत शब्द में चली जाये तो शायद फिर वह वापिस न आये। बुद्धि मानती है, अनुभव मानता है मगर जब तक हम इस दुनिया में हैं इससे बचने का कोई उपाय है।

यह जो हम पर जबरदस्ती होती है जिस तरह पलटूसाहब के साथ हुई, हमारी सम्पत्ति को लूटते हैं या डाकू आ जाते हैं या कोई जबरदस्ती अत्याचार करता है उसका क्या इलाज है? उसका उपाय यह है कि जो देश की हुकूमत है वह इस बात की जिम्मेदारी ले कि किसी निर्बल पर दूसरा आदमी अत्याचार न कर सके। तब किसी हद तक कुछ बचाव हो सकता है। मेरे जिम्मे जगत कल्याण की ड्यूटी है। मैं पोलीटिकल लाइन के विचार से कहता चला आ रहा हूँ कि वर्तमान चुनाव प्रणाली के कारण किसी सूरत में भी यह अत्याचार जो बलवान कमजोर आदमियों पर करते हैं, दूर नहीं हो सकता। क्यों? क्योंकि जो लोग अपनी वोट लेने के लिये एसे आदमियों की वोटे लेते हैं या लेना चाहते हैं जो स्वयं अत्याचार करते, अनुचित रूप से लोगों की लूट-खसूट करने के पक्ष में है अब जिस व्यक्ति को ऐसे लोग वोट देंगे ऐसे व्यक्ति से तुम कैसे आशा कर सकते हो कि वह शान्ति प्रिय लोगों को, यह जो गरीब और निर्बलों पर अत्याचार होता है, उनको बचा सकते हैं।

मैंने अपने आपको सन्त सतगुरु कहा है। जहाँ मैं अध्यात्मिक जगत का ज्ञान दे चला, निर्वाण का ज्ञान दे चला, वहाँ यह भी कह देता हूँ कि जो अत्याचार

जबरदस्ती का हो रहा है कि निर्बल अबल की धन सम्पत्ति छीनी जाती है, मकान जमीन छीने जाते हैं, यह वर्तमान चुनाव प्रणाली की जो हुकूमत बन रही है या बनेगी वह इस दुख से छुटकारा नहीं दिला सकती। यह तो है सांसारिक जबरदस्ती।

असली छुटकारा तो है जन्म मरण से बच जाना। उसके विषय में मैंने इन पांच सत्संगों में बहुत कुछ कहा है। यदि कोई आदमी साधक है भी तो जब तक वह शरीर में है उसको बाहरी दुनिया नहीं छोड़ेगी। जब पलटूसाहब जैसे सन्त को नहीं छोड़ा नामदेव को नहीं छोड़ा, ईसामसीह को नहीं छोड़ा, स्वामी दयानन्द को, महात्मा गांधी को नहीं छोड़ा तो फिर इस दुनियां में बचने का क्या इलाज है? हुकूमत ऐसी होनी चाहिये, उसके कानून ऐसे होने चाहिये कि दुनियां के अन्तर उसका भय होना चाहिये। जहाँ हुकूमत का भय नहीं है वहां पब्लिक में शान्ति (अमन) नहीं आ सकती। इस समय क्या दशा है? गांव वाले भी डर के मारे रात को बाहर नहीं निकलते। इसलिये यदि कोई चाहता है कि देश में अमन या शान्ति हो तो हुकूमत शक्तिशाली होनी चाहिये मगर हुकूमत क्या करे!जो हम उसके कार्यकर्ता हैं, जो कार्यकारिणी (Executive) के हैं वह स्वयं भ्रष्ट है। गरीब आदमी तो कानून से नहीं डरता। मैं सोचता हूँ कि इसका क्या उपाय है। इसका उपाय यह जितने धर्म, सम्प्रदाय और पंथ वाले हैं यह कर सकते हैं। कैसे? यह लोगों को ऐसी शिक्षा दें, चाहे रोचक हो चाहे भयानक चाहे यथार्थ जिससे लोगों का आचरण (moral) ठीक हो जाये। मैंने देखा कि आमतौर से हम महात्माओं के धार्मिक आचार्यों के, गुरुओं के, हम मस्ज़िद, मन्दिर, गुरुद्वारों और गिरजाघरों के मालिकों के आचरण ठीक नहीं है। आदमी का प्रभाव दूसरे पर उस समय पड़ता है जब वह स्वयं क्रियात्मक हो अन्यथा नहीं पड़ता।

हम महात्मा लोग क्या करते हैं? मैंने गुरु पदवी पर आकर जो देखा तो मेरी आंखें खुल गईं। धार्मिक जगत ने इसका पर्दा रखा है या हेरा फेरी रखी है अर्थात हमारे अन्तर में हेरा फेरी है सच्चाई नहीं है और बाहर में हम लोगों को सच्चा बनने, नेक बनने, भक्त बनने की लोगों को शिक्षा देते हैं तो फिर सोचिये हमारी शिक्षा का प्रभाव कैसे हो सकता है? मेरे पास एक सरदार आया करता है। वह किसी समय किसी साधु का सच्चा चेला रहा है। १२ वर्ष उसकी सेवा की।

बारह वर्ष के बाद वह साधु बीमार हुआ। वह कुँए पर जाकर सुबह ५ बजे लोहे के डोल में बँधी जंजीर को खड़खड़ाता और शब्द गाता। उस सरदार ने पूछा महाराज! आप क्या करते है? उसने कहा यदि ऐसा न करूँ तो लोग पैसा कहाँ से देंगे! मुझे भक्त कैसे कहेंगे कि यह प्रातः नहाता नहीं है, अब तुम सोचो! जिस महात्मा के अन्तर इतनी हेराफेरी है वह लाख दुनियां को उपदेश दे कि तुम मन के पवित्र होकर रहो, धोखा न दो, उसके कहने का दुनिया में क्या प्रभाव होगा! आज कल के महात्मा कहते हैं कि हम तुमको मरते समय ले जायेंगे, हम तुम्हारे अन्तर में प्रकट होते हैं, हमारे आशीर्वाद से तुम्हारे पुत्र होगा, तुम मुकद्मा जीत जाओगे, मेरे साथ यह रोज बीतती है मगर मुझको पता नहीं होता और न मैं कुछ करता हूँ।

जब भारतवर्ष में इन धार्मिक आचार्यों, मंहतों, गुरुओं और महात्माओं का यह व्यवहार है, हमारा अपना ही आचरण (moral) ऐसा हो तो इस संसार में शान्ति की क्या सूरत हो सकती है। तुम दुनिया के विचारों को कैसे बदल सकते हो। इसलिये मैं कहता हूँ कि ऐ धार्मिक जगत के महात्माओं! अपने ऊपर दया करो और पब्लिक के ऊपर दया करे।

तीसरी बात यह है कि इस समय हम नवयुवकों में बेजब्ती (नियंत्रणहीनना) देखते हैं। कहीं रेलें उखाड़ते हैं, कही मारधाड़, कहीं बसें जलाते हैं आदि। यह वर्ग नियंत्रण से बाहर (out of control) हुआ है। क्यों? क्योंकि यह पैदा ही बेजन्त (out of control) होकर किये गये हैं। केवल स्वाद के लिये, अपने विषय विकार के लिये मानव जाति ने संतान पैदा की है और वह बिना बुलाये या बिना संतान की इच्छा के बच्चे पैदा हुये हैं। उनसे तुम कैसे आशा रख सकते हो कि वह देश में शान्ति रखेंगे।

यह संसार कठिन है। इस समय शान्ति प्रिय लोगों के लिये भारत में जीवन व्यतीत करना महा कठिन हो रहा है। अभी तो थोड़ा ही कठिन है! आगे जाकर देखना क्या होता है। यदि यही चुनाव प्रणाली और धार्मिक जगत के लोगों की दशा रही तो आगे और भी अधिक कठिनाइयाँ आयेंगी।

इब्तदाये इश्क है रोता है क्या।
आगे आगे देखना होता है क्या।।

यह है ज्ञान जो मैं देना चाहता हूँ निर्वाण का भी और संसार का भी:-

कहने को तो बन्द मुक्ति, कल्पना मन की सही।
बिन सतगुरु के वह मिटती नहीं है जीते जी।।

वह कहते हैं बिना दया-सोचता हूँ कि क्या गुरु कोई दया कर सकता है। यदि कर सकता है तो क्या कर सकता है? जब यादराम (टप्पल) व देवास के लड़के या दूसरे लोगों ने मुझको बताया कि मेरे रूप ने उनको दर्शन दिये, पर्चा हल कराया, दवायें बताईं और मैं नहीं था तो कैसे मानूँ कि बाहर का गुरु दया करके किसी को कुछ दे सकता है बाहर के गुरु की यह दया है कि वह जीव को सीधा और सच्चा रास्ता बता दे और उसकी बुद्धि को निश्चयात्मक बना दे जीने का भेद बता दे। वह मैं करता हूं।

अब इस दया में राज या भेद क्या है? जिस तरह लोग अपने अन्तर में अपनी वासना या इच्छा को प्रबल करके मेरा रूप प्रगट करके अपना काम बना लेते हैं और यश मुझको देते हैं और मैं होता नहीं, तो फिर गुरु की दया क्या है? ऐ इन्सान! तुमको जो कुछ मिलता है, मिल चुका है या आगे मिलेगा, वह तेरी अपनी वासना का फल है या होगा।

मैं अपने आपसे पूछता हूँ कि तू क्या दया करता है। मैं यह दया करना चाहता हूँ कि ऐ इन्सान! अपनी नीयत को शुद्ध रख। जो कुछ चाहता है उसकी प्रबल इच्छा अपने अन्तर में रख क्योंकि मेरे अनुभव ने यह सिद्ध किया है कि जो कुछ किसी को मिलता है वह इसकी अपनी प्रबल इच्छा और वासना का फल मिलता है। इस समय राष्ट्रीय रूप से, देश शान्ति या अमन नहीं चाहता। यह पोलिटीकल पार्टियाँ अमन नहीं चाहतीं। यह अपना बड़प्पन, अपनी कुर्सी और अपनी हुकूमत चाहती हैं। वह इन सबको मिल रही है। पब्लिक का कौन ख्याल करता है! यह तो पौलीटिकल लाइन है।

अब सांसारिक व्यवहार में हम इच्छा करते हैं कि हमारे भाई की सम्पत्ति मुझको मिल जाये। अमुक व्यक्ति मर जाये तो हमारा काम बन जाये। हम यदि अपनी उन्नति की चाह भी करते है तो उसमें हमारे मन के अन्दर दूसरों की हानि करवाने की भावना मौजूद रहती है इसलिये उस चाह या इच्छा का फल यह

निकलेगा कि सम्भव है कि तुम्हारी बेहतरी हो जाये मगर दूसरों की हानि हो जायेगी। इसलिये वेद मार्ग है शिव संकल्प मस्तु। मन वचन कर्म से शुद्ध रहने की कोशिश करो। यह सतज्ञान है जो मैं देना चाहता हूँ।

नाम का दे आसरा, चरणों में अपने लीजिये।

शब्द की महिमा बताकर, पार भव से कीजिये।।

शब्द दो प्रकार के है– अन्तर का शब्द तो केवल निर्वाण के लिये है बाहर का शब्द वह है जो सतगुरु के मुंह से वाणी निकलती है।

गुरु वाक्यम् मंत्रम्

गुरु का जो वाक्य है, जो वचन मुंह से कहता है बाहर का शब्द। जब तक कोई आदमी बाहर के वचन के भाव को समझा कर बाहरी जीवन में ही अपना जीवन नहीं बनाता तो निर्वाण और मुक्ति तो बिल्कुल भिन्न बात रह जाती है। गुरु वाक्य से गुरु ग्रन्थ साहब भरा पड़ा है, वेद अधीन गुरु के वाक्य से भरे पड़े हैं। कौन गुरु वाक्य को ग्रहण करता है? ग्रहण कर नहीं सकता। क्योंकि जो इन वाक्यों की व्याख्या करने वाले हैं वह स्वयं उन वाक्यों पर नहीं चलते। तो गुरु की बात को सुनना, समझना उस पर क्रियात्मक होना ही गुरु की दया मेरी समझ में आई है। हो सकता है कोई गुरु और दया कर सकते हों। मैं नहीं कर सकता भेद बता सकता हूँ। यही राधास्वामी मत है।

हुजूर राय सालिगराम जिन्होंने यह वाणी रची और यह पंथ चलाया, जिन्होंने स्वामीजी को बड़ी भारी सेवा की, यहां तक कि टट्टी साफ की, पालकी पर लिये फिरे, सारा धन देते थे, उनकी वाणी सिद्ध करती है कि गुरु ने, बाहर के स्वामीजी ने उनको भेद बताया। यही एक शब्द में 'सार वचन' में लिखते हैं–

गुरु ने दीना भेद अगम का।

सुरत चली तज देश भरम का।।

बाहर का गुरु क्या करता है। भेद देता है। यही भेद मैंने पाया तीन ड्यूटी दाता दयाल ने मुझ पर लगाईं थीं। निर्बल, अबल अज्ञानी जीवों की सहायता करना, जगत कल्याण का काम करना, और भवसागर से पार होने का तरीका

बताना। वह मैं कर चला। सच्चे दिल से दुआ देता हूँ ट्रस्ट वालों को प्रेसीडेन्ट, सैक्रेटरी, विश्वप्रेमी व देवीचरन, नन्दू भाई जिन्होंने मेरे इस भेद को प्रकाशित करने में सहायता की। सच्चे दिल से चाहता हूँ कि मालिक उनका कल्याण करे। इसके सिवाय मेरे पास और कोई पाखंड का जाल नहीं है। मैं आया हूँ अनामी धाम से। अभी तक वहाँ पहुंचा नहीं। अभी अगम लोक तक मेरा ठिकाना है, जहाँ केवल शब्द है।

मैंने यह स्पष्ट वर्णन क्यों किया? क्योंकि दुनिया सतगुरु की दया प्राप्त करने के लिये, गुरुओं के पीछे हाथ बांधे फिरती रहती है। मैं जो दया कर सकता हूँ वह कर रहा हूँ। राज या भेद दिये जाता हूँ दुनियां में रहने का, पोलिटीकल, सामाजिक, आध्यात्मिक लाइन का और आध्यात्मिक लाइन से पार होने का।

नाम का दे आसरा, चरणों में अपने लीजिये।

शब्द की महिमा बताकर, अपना सेवक कीजिये।।

सतगुरु वचन कहता है मगर जो आदमी उसकी वाणी को नहीं समझता, उस पर अमल नहीं करता, सतगुरु उस पर क्या दया करे! सोचो! मैंने अपने आपको गुरुइज्म के पांखड से बचाया है। यहां एक बख्तावरसिंह बैठा हुआ है। यह कहता है कि दो वर्ष हुए दशहरे के सत्संग पर गया। मेरी ओर टकटकी बांधे देखता रहा। इसने ११ वर्ष हुए किसी महात्मा से नाम लिया हुआ था। कुछ लाभ नहीं हुआ मगर वहां बैठे–बैठे अन्तर में प्रकाश हो गया और शब्द खुल गया। आज कल कितने ही लोग कहते हैं कि गुरु तुम्हारी सुरत चढ़ा देता है, प्रकाश दिखा देता है। इसी ख्याल से लोग गुरुओं के पास सेवा करते हैं, उनको धन देते हैं, उनके नाम का ढिंढोरा पिटते हैं, उनका आश्रम बनाते हैं या डेरा धाम बनाते हैं मगर मैं अपने आपसे पुछता हूँ कि क्या तूने उसकी सूरत चढ़ाई थी। क्या तूने उसको प्रकाश दिखाया था या शब्द सुनाया था। मैं तो उसको जानता भी नहीं था। वहां छः सात हजार आदमी बैठा हुआ था मुझे क्या पता था। ऐ बख्तावर! मैंने तेरी सुरत नहीं चढ़ाई तेरी सुरत चढ़ी अपनी आस से तेरे अपने विश्वास से, तेरी सच्ची लगन से या रेडीयेशन के नियम से। यही भ्रम है धर्म और पंथों में। इसीलिये दुनिया का अनिष्ट हो रहा है। तुम्हारे धर्म–कर्म तथा समाज या राजनैतिक लाइन में कहीं सत्यता है तो

बताओ। फिर दुनियां में सुख कहाँ से आयेगा? सुरत चढ़ाने का राधास्वामी मत के अनुसार एक नियम है। ध्यान से उस (सतगुरु) की ओर देखते रहो। जितनी देर हो सके आंखें मत झपको। जो वह कहता है उन वचनों को समझते रहो। तुम्हारी सुरत स्वयंमेव चढ़ जायगी। तुम्हारा विश्वास है तुम्हारी श्रद्धा है। हम महात्माओं ने जीवों के अज्ञान का अनुचित लाभ उठा कर कि हम तुम्हारी सुरत चढ़ायेगें, उनको लूटा है।

तुमको उदाहरण देता हूँ। लोग कहते हैं कि सतगुरु लोगों के अन्तर प्रगट होता है। यह रामस्वरूप ग्वालियर का बैठा हुआ है। ८ वर्ष हुए इसके अन्दर मेरा रूप प्रगट हुआ। वह मुझे नहीं बताता था। किसी बीमार को दवा दी। वह मरने वाला हो गया। इसने मालिक के आगे पुकार की। मेरी लाज जाती है। वह कहता है प्रकाश हुआ। प्रकाश में मेरा रूप प्रगट हुआ। यह सामने बैठा हुआ है पूछ लो। मेरे रूप ने उसको बताया कि अमुक दवा दो। यह इन्जैक्शन दो। यह रात के १२ बजे वहां जाकर दे आया। वह ठीक हो गया। मैं सच कहता हूँ कि न मैं उसके अन्तर गया न दवा बताई। फिर वह कौन था? ऐ इंसान! वह सच्चा सतगुरु सच्चा मालिक तेरे हृदय में रहता है। जीव अज्ञानी है। वह बाहर भटका खाते हैं। उनकी बहिर मुखता को दूर करने को महापुरुष उनको सहारा देते हैं। मैं सच्चा ज्ञान दिये जाता हूँ। ऐ इन्सान! तू यदि अपनी उन्नति चाहता है तो उन नियमों को पालन कर जो सतगुरु बताता है।

पहिले तो बाहर के गुरु को सेवक बनना पड़ता है। मैं बना हुआ हूँ। बाहर के गुरु की संगत में जाना उसकी बातों को ध्यान से सुनना, उसको पूरे ध्यान से देखना। यह सत्संग में अभ्यास हो ही जाता है। फिर नाम है अन्तरी फिर असली सतगुरु वह सत, अलख अगम में रहता है। यह राधास्वामी मत में हुजूर महाराज ने कहा है।

सखी री मोहि मत रोको, मैं तो जाऊँगी सतगुरु पास।
सतगुरु मेरे अधर विराजे, वहां संतन का बास।
पिंड अंड ब्रह्मण्ड के पारा, सत अलख अगम निवास।।

वह सतगुरु है असली और सच्चा। तो हुजूर महाराज ने उस समय यह तो

नहीं कहा कि मेरा गुरु पन्नी गली में रहता है या स्वामी शिवदयालजी महाराज हैं। वह तो कहते हैं कि मेरा गुरु सत अलख अगम में रहता है। गुरु की यही दशा है कि सत्संग में बैठ कर तुमको भेद या राज दे क्योंकि साधारण जीव इस भेद के अधिकारी नहीं होते हैं। उनकी श्रेणियां है। कोई पहिली श्रेणी में पढ़ता है, कोई दूसरी में कोई तीसरी में और कोई दसवीं या बारहवीं में। उनके लिये अलग अलग हिदायतें होती हैं। इसलिये गुरु वाक्य मूल मंत्र है।

सच्चिदानन्दम् अखंडम, केवलम् निज रूप हो।
निज दया से जाय, दुखदाई महा भव कूप खो।।

इसकी व्याख्या मैंने पांच सत्संगों में बड़े स्पष्ट रूप से कर दी है। वह अकह आगाध अपार अनामी जिसका अंश तुम्हारी सुरत है, जिसका अगम देश शब्द स्वरूप है, सतलोक प्रकाश और शब्द है, हमारा में पना सोहंग है मन बुद्धि, चित्त, अहंकार है और फिर यह शरीर है। वही इसमें आई हुई है। जब जीव को ज्ञान हो जाता है फिर वह मुफ्त अवस्था या विदेह गति में आ जाता है। इस दुनिया में रहता हुआ अब मैं सोचता हूँ कि तू इतना ऊँचा चला गया, अब दुनिया में जीवन कैसे काटता है। क्या मैं २४ घंटे वहां रहा सकता हूँ? नहीं ! दुनियाँ में रहते हुए, उसके रूप को समझते हुए इसमें न फँसना ही इष्ट पद है। यही जीवन मुक्त और विदेह गति सन्तों की है। यही सनातन धर्म की है, यही जैनियों, बौद्धों की है। क्या अन्तर है? केवल यह है कि गुरु के बिना इस भेद का, इस अवस्था का पता नहीं लगता। इसलिये सतगुरु की महिमा गाई आती है ताकि सतगुरु ज्ञान दे दे।

आपका है आसरा, और आपका विश्वास है।
राधास्वामी तार दीजे, यह तो तुम्हारा दास है।।

कौन राधास्वामी तारेगा? बाहर का गुरु तुमको तारेगा। मैं कभी सोचा करता था कि सब सन्तों का इष्टपद अनामी तक है। मुसलमान लाईला इल इल्लाह तक पहुंचे। राधास्वामी मत वालों ने नया शब्द राधास्वामी क्यों कर दिया? अब मैं समझता हूँ कि क्यों कर दिया? क्योंकि इस अनामी धाम में तो मनुष्य हर समय रह नहीं सकता। जब यह ज्ञान हो जाता है कि मैं कौन हूँ अर्थात अकह अपार अगाध अनामी का अंश हूँ इस शरीर में आया हुआ हूं तो उस शब्द का आसरा या

उस अनामी धाम का आसरा रखता हुआ मनुष्य दुनिया में जो विचरता है उस अवस्था का नाम मेरी समझ में राधास्वामी है। राधास्वामी मत वाले मुझसे असहमति रखते हों उनको अधिकार है। मैं अभ्यासी हूँ। तुम देखते हो कि मेरा दिन भी और रात भी अभ्यास में बीतता है। वहां जाकर क्या कुछ बन जाता हूँ? फिर होश आता है तो जब तक दुनिया में हो सत्संग करके थोड़ा साधन करके बात को समझ लो। फिर मुक्त अवस्था में आ जाओ। फिर उस अवस्था में रहता हुआ मनुष्य दुनिया के दुख सुखों से घबराता नहीं। कर्म के अनुसार दुख–सुख सबको आते हैं। कोई रोक नहीं सकता।

इन सत्संगों में मैंने महात्माओं, लीडरों तथा जनसाधारण को अपने क्रियात्मक जीवन व्यतीत करने का अनुभव वर्णन किया है। जीवन अनुभव से गुजरता जा रहा है। कल ही दो कर्मचारी मन्दिर में गुत्थम गुत्था हो गये। ख्याल आता है कि तेरी क्या शिक्षा है? तू अपने आपको अमल करने वाला कहता है। क्या तेरे क्रियात्मक जीवन का कोई प्रभाव उन पर हुआ? मैंने दातादयाल का दरबार भी देखा था। हुजूर साँवले शाह का दरबार भी देखा। बड़े–बड़े महापुरुषों के जीवन और उनके साथ चेले व रिश्तेदारों के जीवन देखे। मैं इस परिणाम पर आया कि यह सारा संसार या तो जीवों के अपने कर्मों का है या भगवान की अपनी इच्छा है। मैं महसूस करता हूँ कि मैंने जीवन में जो कुछ किया वह मेरा अपना ही कर्म था। अपने ही मन को खोज थी। अपने ही आपको एक खब्त में डाला मगर मुबारिक यह खब्त कि मुझको यह ज्ञान हो गया।

तेरी लीला कौन जाने, तू जो अपरम्पार है।

वो जो कर्मचारी मन्दिर में झगड़े, उनको ज्ञान दाता की हैसियत से नमस्कार करता हूँ। वह यही ज्ञान है–शरणागतम्

मेरे साहित्य के पाठकों! यदि तुम यहां पहुँच जाओ तो शान्ति शान्ति है। शान्ति ही इष्ट पद है।

लोग गुरुओं की इसलिये सेवा करते हैं कि वह सतलोक ले जायेगा या अन्तर में दर्शन दे देगा या अपनी सुरत चढ़ा देगा। इससे इन्कार करता हूँ। जो ऐसे पुरुष की सेवा करते हैं वो निष्कपट निस्वार्थ है, वह बड़े पुन्यात्मा हैं। अपने स्वार्थ

के लिये तो सब ही ईश्वर या गुरु की सेवा करते हैं। मेरी सेवा करने वाले आप थोड़े से आदमी हैं। मेरे पास सिवाय शुभ भावना के और कुछ नहीं है।

सब को शान्ति

पांच नाम की व्याख्या

प्रथम शब्द स्थान

सुनरी सखी तोहि भेद बताऊँ। प्रथम स्थान खोल कर गाऊँ।।
सहस कँवल दल नाम सुनाऊँ। जोति निरंजन बास लखाऊँ।।
करता तीन लोक यह ठाऊँ। वेद चार इन रचे जनाऊँ।।
ब्रह्मा विष्णु महादेव तीनों। पुत्र इन्हीं के हैं यह चीन्हों।।
कुल वैराट रचा इन मिलके। जीवन घेर लिया इन पिलके।।
जाल बिछाया जग में भारी। इनकी पूजा जीव सम्हारी।।
फँसे जाल में पचे कर्म में। धोखा खाया पड़े भरम में।।
अब जो इनको कोई समझावे। सत्त पुरुष का भेद लखावे।।
तो नहिं माने झगड़ा ठान। पक्षपात कर ढिंग नहिं आवें।।
या ते मैं तो को समझाऊँ। यह सब ठग खुल कर जतलाऊँ।।
इनके मारग तू मत जाय। तू संतन की शरन समाय।।
सतगुरु कहें सोई तुम मानो। इनका वचन न कर परमानो।।
राह रकाना देऊँ दरसाई। पता भेद अब कहूँ जनाई।।
मन और सुरत जमाओ तिल पर। घेर घुमर घट जाओ पिल कर।।
निरखो खिड़की देखो चौका। चित्त लगाओ राखो रोका।।
पचरंगी फुलवारी रखो। दीपदान घट भीतर परखो।।
कोई दिन ऐसी लीला देखो। नील चक्रता आगे देखो।।

विरह प्रेम बल ताको फोड़ो। जोत निहारो मन को मोड़ो।।

अनहद घंटा सुन सुन रीझो। शंख बजाओ रस में भीजो।।

यह पहला अस्थान बताया। राधास्वामी वरन सुनाया।।

अपना बचपन याद आता है। जब मैं बच्चा था तो उस परमात्मा को मिलने के लिये प्रार्थना किया करता और बेहोश हो जाया करता था। चित्त में यह विचार बैठा हुआ था कि मन्दिर में, मस्ज़िद में, तीर्थों में हर जगह भगवान है। जब स्कूल में पढ़ा करता था तो मेरी यह दशा थी कि हरी घास पर टट्टी नहीं बैठता था। ख्याल था कि इसमें जान है और मेरी टट्टी से यह दुखी होगी। मैं सिपाही का लड़का हूँ, मेरे पिताजी ने एक बकरी रखी हुई थी। एक बार उन्होंने मुझसे कहा कि बकरी के लिये कीकर (बबूल) की फलियां तोड़ लाओ। मैं जब फलियां तोड़ने लगा तो उनमें दूध जैसा सफेद रंग का पानी निकलने लगा। मुझे ख्याल आया कि यह वृक्ष का खून है। मैं रोने लगा पिता ने समझा कि कहीं काँटा लग गया होगा। वह दौड़ते हुऐ मेरे पास आये और कहने लगे कि क्या हुआ। मैंने कहा कि मैं फली नहीं तोडूंगा। पूछा क्यों? मैंने कहा इसमें जान है। तो उन्होंने मुझे मारा। वह समय भी गया। स्कूल से निकला। पिताजी आगे पढ़ा नहीं सकते थे। सर्विस में आ गया। बुरी संगत में पड़ गया। कई बार मांस खाया। तीन बार शराब पी। एक बार वैश्या के पास गया। सन् १९०५ ई० में कांगड़ा में भूचाल वाली रात को अपने कुकर्म के कारण मैं बहुत दुखी हुआ। ख्याल आया कि मैं तो बचपन से भगवान से मिलना चाहता था और अब किधर चला गया। हिन्दू हूँ, ब्राह्मण हूं। बड़े भाई पं० रामनरायन रामायण आदि पढ़ा करते थे। वहां से ख्याल मिला कि भगवान अवतार लिया करते हैं।

नाना भांति राम अवतारा।

रामायण शत कोटि अपारा।।

फिर यह उन्मत्तपना आ गया कि भगवान को मानव रूप में देखूँ। एक दृश्य था जिसके द्वारा मैं दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरणों में पहुँच गया। उनको राम समझ के पूजता था। उन्होंने मेरे विचार बड़ी युक्ति से बदला और गुरुमत में लगाया नाम दान दिया। सारवचन पद्य और कबीर शब्दावली पढ़ने को दी। इनको पढ़ा तो दिमाग में कुछ और ही विचार पैदा हुआ। चूँकि इस

राधास्वामी मत में खंडन था जैसा कि ऊपर के शब्द में कहते हैं कि प्रथम स्थान ज्योति स्वरूप का है। इसके मार्ग मत चलना, यह ठग है और सन्तों की तुम जुगत कमाना। अब ऐ भारत के धार्मिक जगत के लोगों! जो व्यक्ति बचपन से उस भगवान को मानता है उसके लिये ऐसी वाणी को सुनना कितना कठिन काम है। उस समय मैंने प्रण किया था कि इस रास्ते पर सच्चा होकर चलूँगा और जो कुछ मुझे मिलेगा वह संसार को बता जाऊँगा आज कहे जाता हूँ कि भगवान या असली जो मालिक है वह सच मुच ज्योति स्वरूप नहीं है। क्यों कहता हूँ? क्योंकि जो ज्योति स्वरूप है यह एक हमारे अन्तर हैं और एक हमारे बाहर है। जो ज्योति स्वरूप है वह प्रकाश है और यह प्रकाश उत्पत्ति करता है। वर्तमान विज्ञान भी यही सिद्ध करता है।

इंगलैड के डा० पाल ब्रिन्टन ने, एक पुस्तक है Inner Reality (अन्तरीय सच्चाई) लिखी है। उन्होंने इस पुस्तक में एक दूसरी पुस्तक जिसका नाम Rana Science of Physice का उल्लेख है। उसके पृष्ट ३०१ पर डा० कर्ल के Research physicist लिखते हैं कि ज्योति के अन्दर अणु होते हैं। अणु किसी वस्तु के छोटे अंश को कहते हैं। अणु का नाम उन्होंने Proton रखा है। वह लिखते हैं कि प्रोटोनस से इलैक्ट्रोन्स (Electrones) निकलते हैं। वह इलैक्ट्रोन्स होते हैं निगेटिव (Negative) और प्रोटोन्स हैं पोजीटिव। प्रोटोन में यह शक्ति है कि वह ग्रोसमैटर (जड़ या स्थूल पदार्थ) को बनाती है। और इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स मिलकर स्थूल पदार्थ को बनाते हैं और वह अणु कासमिक किरणों (Cosmic Rays) से शक्ति लेते हैं। उसने यह सिद्ध किया कि स्थूल सृष्टि की जितनी रचना है यह प्रकाश से होती है। प्रकाश के अन्दर जो प्रोटोन है वह इलैक्ट्रोन बनकर और फिर प्रोटीन से मिलकर जड़ पदार्थ को पैदा करता है और वही इस स्थूल जगत को बनाते हैं। वही जड़ पदार्थ फिर बदलकर प्रकाश हो जाता है तो इस संसार की उत्पत्ति प्रकाश से होती है। अब तुम सोचो कि जो व्यक्ति इस प्रकाश (ज्योति) को स्वरूप को चन्द्रमा को मानते हैं और उसकी पूजा करते हैं वह इस संसार के चक्र से कैसे निकल सकते हैं। जो आदमी ज्योति स्वरूप को ईश्वर या खुदा मानकर उसके ही ध्यान में मग्न रहता है वह इस साइंस

के सिद्धान्त के अनुसार इस शरीर में आने और फिर ज्योति स्वरूप बनने से कैसे बच सकता है? तुमने ज्योति स्वरूप का ध्यान किया। वह तुम्हारे सामने है। घंटा बजता है तो होगा क्या? तुम्हारा जीवन हमेशा इस शरीर को धारण करता रहेगा। शरीर को छोड़कर कभी ज्योति (लाइट बनेगा और फिर शरीर बनेगा। यह वैज्ञानिकों की वर्तमान रिसर्च है जिसके अनुसार मैं कह रहा हूँ। वह कहते हैं कि इस दुनिया की उत्पत्ति प्रकाश (लाइट) से होती है। उस प्रकाश में से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स प्रकाश के हर एक अणु से निकलते रहते हैं। प्रकाश इतना बड़ा है कि इनमें करोड़ों और अरबों अणु होंगे और हर एक अणु से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स निकलते रहते हैं। वह इस सृष्टि को बनाते हैं और बनाते रहते हैं। जब समय आता है तो वही वस्तु प्रलय में आकर फिर प्रकाश (लाइट) बनती रहती है। साइंस के सिद्धान्त के अनुसार मैं यह मानने के लिये विवश हूँ कि जो ज्योति स्वरूप का ध्यान करता है और उसी को ईश्वर या खुदा मानता है वह इस चक्र से निकल नहीं सकता है। यह चक्र क्या है? यह रचना है। शरीर का धारण करना और फिर ज्योति स्वरूप हो जाना और फिर वही चक्र। इसलिये मैं विवश हूँ वर्तमान विज्ञान के अनुसार संतों के मार्ग को सच्चा सिद्ध करने के लिये। स्वामी जी कहते हैं:–

सुनरी सखी तोहि भेद बताऊँ।
प्रथम स्थान खोल कर गाऊँ।।

सखी सहचरी या साथी को कहते हैं। जो हमेशा को दुख सुखों से बचना चाहता है उसको सखी शब्द से सम्बोधन करके कहा गया है। दुख सुखों से कौन बचना चाहता है? वह जिसको इस दुनिया का अनुभव हो गया है। तुम देखते हो कि करोड़ों कीड़े उत्पन्न होते हैं और एक कीड़ा दूसरे को खाता है। बड़ी मछली छोटी को खाती है। किसी की टांग कटती है किसी का सिर कटता है। कितने ही रोग दुनिया में आते हैं और लोग उनमें पीड़ित होते हैं और मरते खपते हैं। तो जिनको समझ आ जाती है कि इस संसार में कुछ नहीं है और जिनको अनित्य सुख की खोज है जहां जन्म मरण दुख सुख कुछ नहीं है, उसको कहते हैं कि ऐ सखी! यदि तू दुख सुखों से बचना चाहती है तो सुन! मैं तुझको भेद बता दूँ।

देखो! यह कोई नहीं सोचता है कि जब बच्चा पैदा होता है तो स्त्री को

कितना कष्ट होता है। यदि घर का एक मर जाता है तो पीछे रहे लोगों को कितना दुख होता है। तो यह संसार है। यह सारा खेल ज्योति स्वरूप का है। ज्योति स्वरूप को ईश्वर या खुदा मानकर ध्यान करने वाले इस जन्म मरण के चक्र से बच नहीं सकते जैसा मैंने पहिले कहा है। धार्मिक पक्षपात एक और बात है और सत्यता या असलियत एक और बात है। श्री कृष्ण ने अर्जुन को ज्योति स्वरूप ही का दर्शन तो कराया था जिसको कहते हैं कि श्री कृष्ण ने अर्जुन को विराट रूप दिखाया था। अर्जुन ने उस विराट रूप में देखा कि यह कौरव पहिले ही से ही मरे हुए हैं। यह जो विराट पुरुष है ज्योति स्वरूप है। यह कर्त्ता पुरुष है क्योंकि यह रचना करता है। स्वामीजी आगे कहते हैं–

सहस कंवल दल नाम सुनाऊँ।
जोति निरंजन वास लखाऊँ।।

सहस कँवल दल – हजारों पंखड़ियों वाला। वह जो प्रकाश है, अणु है जिनमें से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स उत्पन्न होते है जैसा कि साइंस सिद्ध करती है और वह इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स वह स्थूल पदार्थ (Gross matter) को पैदा करते हैं। सन्तों के मार्ग में जो वस्तु ज्योति स्वरूप में रहती हुई जोति को देखती है और उसकी साक्षी है वह इस दुनिया में फँसी हुई है। तो जब तक कोई जोति स्वरूप का ध्यान करता रहेगा वह आवागमन के चक्र से नहीं निकल सकता। क्योंकि उसका तो काम ही यह है कि वह रचना करता रहता है और फिर प्रलय होती रहती है।

कर्ता तीन लोक यह ठाऊँ।
वेद चार इन रचे जनाऊँ।।

वह त्रिलोकी का कर्ता है। देह मन और आत्मा, त्रिगुणात्मक जगत का वह पैदा करने वाला है। मैं स्वामीजी की बात को सत्य मानने को विवश हूँ क्योंकि वर्तमान विज्ञान ने भी इस बात को सिद्ध कर दिया है। डा० पाल ब्रिन्टन ने अपनी पुस्तक Inner Reality में लिखा है कि मैंने ज्योति (Light) के अणुओं को अलग करके इनसे पदार्थ (Matter) पैदा किया है। वह लिखता है कि मेरा अनुभव यह सिद्ध करता है कि इन्हीं अणुओं से स्थूल पदार्थ बनता है उसने छोटे

रूप में अनुभव किया है मगर उस ज्योति स्वरूप में तो करोड़ों और अरबों मौजूद हैं। वह सब इस दुनिया को रचते है।

ब्रह्मा विष्णु महादेव तीनों।
पुत्र इन्हीं हैं यह चीन्हों।।

इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स में यह शक्ति है कि वह स्थूल पदार्थ को बना देते हैं। फिर वह तोड़ देते हैं। पहिले वह स्थूल पदार्थ बनता है। कुछ देर तक कायम रहता है फिर टूट जाता है। यह तीन शक्तियां हैं जो उस जोतिस्वरूप से निकलती हैं। जिससे जोति कहते हैं वह तुम्हारे अन्तर भी है और बाहर है। जोतिस्वरूप का एक बड़ा भारी लोक है जिसमें जोति जलती है।

कुल वैराट रचा इन मिलके।
जीवन घेर लिया इन पिलके।।

उसने रचना तो रच दी। जीव जन्तु स्थूल शरीर बन गये। अब सब जीव इसको घेरे हुए है। जन्मते हैं और मरते हैं। कहीं भूचाल आ गया, कहीं बाढ़ आ गई। कितने ही आदमी मर गये। तो जो कुछ यही हो रहा है जीवन मरण, बुरा, भला, यह है क्या? यह सब ज्योति स्वरूप का खेल है जिसने वह सृष्टि रच कर हम सबको इसमें जकड़ दिया है। हम जन्मते हैं, मरते हैं, हाय हाय करते हैं। छुटकारे की कोई राह नहीं। एक जन्म लिया, दूसरा लिया, तीसरा लिया यह क्रम चलता ही रहता है। कितने ही दुखी मेरे पास आते हैं। कोई अपंग है। कोई कहता है मेरा दिमाग ठीक नहीं। यह है क्या? ज्योति स्वरूप ने सबको घेर लिया हुआ है।

जाल बिछाया जग में भारी।
इनकी पूजा जीव सम्भारी।।

स्वामीजी कहते हैं कि जाल इतना बड़ा बिछा हुआ है कि जीव बेचारे दुखी हैं। इस ज्योतिस्वरूप ने सबको वश में किया हुआ है। जो इस ज्योति स्वरूप को ईश्वर मानता है उसकी पूजा करता है वह इस चक्र से कभी नहीं निकल सकता। उसका जन्म मरण दुख-सुख कभी समाप्त नही हो सकता। मैं अपने आपसे पूछता हूँ कि तू संतमत का पक्ष तो नहीं करता। उत्तर है नहीं। मैं वर्तमान

विज्ञान को लेता हूँ। वर्तमान साइंस की रिसर्च यह सिद्ध करती है कि प्रकाश से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स निकलते हैं और वह इस स्थूल जगत को बनाते हैं। तो जब तक किसी का इष्ट ज्योतिस्वरूप होगा वह इस चक्र से नहीं निकल सकता। यह साधारण समझ की बात है।

फँसे जाल में पचे करम में।
धोखा खाया पड़े भरम में।।

जो व्यक्ति उस ज्योतिस्वरूप को भगवान समझकर इसलिये मानता है कि मैं इस संसार से निकल जाऊँगा वह भ्रम में है, अज्ञान में है। जब कभी मैं प्रेम में आकर गाया करता था कि वह मेरा मालिक है तो दातादयाल जी मुझे इशारों-इशारों में समझाया करते थे मगर उन्होंने मेरे दिल को नहीं तोड़ा कि मैं गलती पर हूँ। यह तो मन के विचारों को पूजा है या ब्रह्मा विष्णु और महेश को पूजा है। विचार में रहना, विचार विचारे में आकर परमात्मा की प्रार्थना करना या मन के विचार से रोना या प्रार्थना करना या निकलने की इच्छा करना या किसी से सहायता की इच्छा करना यह ब्रह्मा, विष्णु, महेश तो सहायता कर देते हैं मगर जब तक वह अपने मन से प्रार्थना करता रहेगा वह निकलेगा नहीं। वह तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश जो इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स जो शक्तियां बनती हैं वह तो उनका सहारा लिये हुये हैं। जब इनसे ऊँचा जायेगा तो ज्योति को पकड़ लेगा। इन प्रार्थना करने से तुमको आनन्द मिलेगा, धन मिलेगा अथवा दुनिया की और वस्तुयें मिल जायेंगी मगर इस प्रार्थना करने से तुम संसार के चक्र से नहीं निकल सकते। ट्रस्ट वालों ! यदि कभी समय मिले तो मेरे विचारों को प्रकाशित करवा देना ताकि जो सचमुच इस चक्र से निकलना चाहते हैं उसको सीधा रास्ता मिल जायें।

भगवान के या खुदा के आगे प्रार्थना करने से तुमको आनन्द मिलेगा दुनियां की दूसरी वस्तुओं की तुम्हारी मनोकामनायें पूरी हो जायेगी। इसलिये हमारे हिन्दू ऋषियों ने संसार की मनोकामना पूरी करने के लिये गायत्री मंत्र में तुमको सावित्री का ध्यान बताया ताकि तुम्हारी सांसरिक, वस्तुयें तुमको मिल जाये और तुम सुखी रहो। जब सावित्री या प्रकाश तुम्हारे अन्दर आ जायेगा अर्थात् जोति स्वरूप आ जायेगा, तो तुमको दुनिया की सफलता हो सकती है मगर तुम इस चक्र

से निकल नहीं सकते। मैं सन्तमत या स्वामी जी की हां मैं हाँ नहीं मिला रहा किन्तु साइन्स की रिसर्च ने हमारे दिमाग खोल दिये हैं। जो साइंस की रिसर्च सिद्ध करती है वही संत मत कहलाता है इनकी वर्णन शैली और है तथा स्वामी जी की वर्णन शैली और है तथा स्वामी जी की वर्णन शैली पर तो कोई विश्वास नहीं कर सकता सिवाय उनके जो उनके विश्वासी है मगर साइंस पर सब विश्वास करने को विवश हैं। अब जो ज्योतिस्वरूप का ध्यान करते हैं या प्रार्थना करते हैं। अब जो अपने घर नहीं जा सकते। प्रार्थना किससे? अपने मन से या अपने विचार से।

अब जो कोई इनको समझावे।

सत्त पुरुष का भेद लखावे।।

वह लोक या स्थान जहां जाकर फिर कोई वापिस नहीं आता उसको सत लोक कहते हैं। मैं यहां पांचों स्थानों (Stages)की व्याख्या करूँगा। आज पहले स्थान का वर्णन किया है। जहां जाकर हमको फिर वापिस नहीं आना है वह अजर अमर देश है। वह सत पुरुष है।

यह नहि मानें झगड़ा ठानें।

पक्षपात कर ढिंग नहिं आवें।।

स्वामी जी कहते हैं कि यदि मैं सच्ची बात कहता हूं तो लोग झगड़ा करते हैं और पक्षपात में आकर मेरे पास भी कम लोग आते हैं। क्यों? क्योंकि ज्योतिस्वरूप ने लोगों को ऐसा जकड़ रखा है कि वह निकल नहीं सकते और न वह निकलने ही देता है।

या ते मैं तो को समझाऊँ।

यह सब ठग खुल कर जतलाऊँ।।

ठग उसको कहते हैं जो किसी को ठग लेता है। हमारी सुरत सतलोक से आई हुई है। उसको जोति स्वरूप ने या उसकी शक्ति ने वश में किया हुआ है। ठग लिया हुआ है। सुरत को इतना घेर रखा है कि वह निकल नहीं सकती। तुम अपने जीवन को देखो, कौन निकल सकता है।

इनके मारग तू मत जाय।

तू संतन की शरण समाय।।

स्वामी जी कहते हैं कि तुम जोतिस्वरूप को इष्ट पद मत समझो यह तो रास्ते की इस रचना के क्रम में एक सीढ़ी है। यह एक श्रेणी या स्थान है। तुम सन्तों की शरण में जाओ। शरण में जाने का यह अभिप्राय नहीं कि उन साष्टाँग दण्डवत करते रहो तथा रूपया देते रहो। अभिप्राय यह है कि उनके सत्संग में जाओ। जो वह वचन कहें उनको सुनो और समझो और अपने अन्तर गुनो। फिर अपनी सुरत को इन पांच श्रेणियों से निकाल कर ऊपर ले जाओ। पहली श्रेणी या स्थान जोतिस्वरूप का है जिसका यह वर्णन है।

सतगुरु कहें सोई तुम मानो।

उनका वचन न कर परमानो।।

सतगुरु के वचन को मानने वाले बहुत कम लोग हैं। यदि कोई आदमी संतों के पास जाता भी है तो यह चाहता है कि उसके पुत्र हो जाये, उसका घर बन जाये। सत्संग के लिये सन्तों के पास कोई नहीं जाता। संतों का वचन तो यह है कि अपने अन्तर चलो ताकि हमेशा के लिये तुम्हारा आवागवन का चक्र समाप्त हो जाये। संतो के वचनों का जो प्रमाण था वह मैंने साइंस के सहारे सिद्ध कर दिया कि संत जो कहते हैं वह बिल्कुल सत्य है।

राह रकाना देऊँ दरसाई।

पता भेद अब कहूँ जताई।।

वह कहते हैं कि तुम्हारा घर जहां तुमने जाना है वह पांच स्थान से ऊपर है। उन स्थानों का मैं तुमको भेद या गुरु बता देता हूँ। यही बाहर के गुरु की महिमा है। या यों समझ लो कि उसकी रेडीयेशन काम करती है जिस तरह संसार में बिजली की रेडियेशन है। यह तार बिजली के भी और दूसरे भी लगे हुए हैं। जब यह तार गाढ़ते हैं तो इनमें छः इंच की दूरी होती है क्योंकि जिस तार से बिजली जाती है। वह बिजली से भरा (Electrified) हो जाता है और उसके इर्द-गिर्द बिजली का चक्कर रहता है। यदि कोई दूसरा तार उससे छः इंच के अन्तर आजाये तो एक ही बिजली निकल कर दूसरे तार में आ जाती है। उसको अंग्रेजी में

इंडक्शन (Induction) कहते हैं। एक तार से जो बिजली जाती है उसके छः इंच तक उसकी रेडीऐशन आगे पीछे फिरती रहती है। तार कोई और होता है और सरकट कोई और बोलता है। वह केवल बोलता है क्योंकि (Induce) हो जाता है। इसी प्रकार संतो के पास जाने से उनकी सत्यता, निर्बन्धता, निष्कपटता या अपने घर में रहने की जो रेडीयेशन है वह उसी तरह से जीव में प्रभाव करती है जिस तरह कि एक–तार जिसमें से बिजली चल रही है दूसरे तार पर प्रभाव कर जाती है। चूंकि वह अधिक शक्तिशाली होती है इसलिये वह कमजोर तार पर प्रभाव कर जाती है। इसी तरह संतों के सत्संग में जाने से उनकी रेडियेशन जीव के अन्तर (Induce) हो जाती है और उसकी शान्ति, बेफ्रिकी, बेगमी, निर्भ्रान्ति या संशय रहित होने का जो रेडीयेशन है वह उस जीव को मिल जाता है।

मन और सुरत जमाओ तिल पर।

घेर घुमर घट आओ पिलकर।।

वह कहते हैं कि उस स्थान को पार करने के लिये या जोति स्वरूप से आगे जाने के लिये, इस विराट पुरुष से आगे जाने के लिये या स्थूल प्रकृति से आगे जाने के लिये क्या करना है। यह जो दोनों भवों के बीच और दोनों आंखों से थोड़ा ऊपर स्थान है उसको तीसरा तिल कहते हैं। इस स्थान पर अपने मन को इक्ट्ठा करो, चूंकि यह इक्ट्ठा होता नहीं है इसलिये इसको अजपा जाप या सुमिरन दिया जाता है ताकि मन एकाग्र हो जाये। यह अजपा जाप जो दिया जाता है, कहा तो शास्त्रों ने भी ऐसा ही है कि तुमको विराट पुरुष से आगे जाने के लिये गायत्री मंत्र है मगर हम पंडित लोग न तो अपने अन्तर इस जोति स्वरूप में प्रवेश होते हैं और इससे पार जाते हैं। इस गायत्री मंत्र को केवल रटना ही जानते हैं। ऐसे ही राधास्वामी मत वाले राधास्वामी राधास्वामी मन के जाल का ही साधन करते हैं या पांच नाम की रट लगाते हैं। कोई अल्लाह अल्लाह करता है या कुछ और करता है। तो स्वामी जी कहते हैं कि मन को घेरकर इसे तिल पर लाओ। तिल किसको कहते हैं? मन को इकट्ठा करने के लिये एक स्थान है। उस स्थान पर मन को इकट्ठा किया जाता है।

निरखो खिड़की देखो चौका।

चित लगाओ राखो रोका।।

उस स्थान पर तुम्हारा मन इकट्ठा हो जायेगा तो तुम्हारी चित्त वृति एक जगह हो जायेगी और जो विचार उठते थे वह नहीं उठेंगे मन ठहर जायेगा। उस ठहराव का नाम है चौका। चौका घर में देते है तो एक स्थान को साफ कर देते हैं। फिर कोई दूसरी वस्तु चौके में नहीं आती इसका अभिप्राय यह है कि तुम्हारा मन जब इकट्ठा होने लगे तो उसमें और कोई विचार न उठे। मन के अन्तर जो तरंगे उठती रहती है उनका ही चौका है। फिर उस चौके से आगे उस प्रकाश की ओर जाओ जो जोति स्वरूप है। उस स्थान से तुम उस प्रकाश में जाओगे। चौके से बाहर निकलकर उसका नाम है खिड़की। प्रायः कहा करते हैं कि खिड़की खोल दे हवा आ जाये। अथवा बाहर निकल जाओ। वह जो तुम्हारा मन है पहले उसका चौका लगता है। फिर उसके अन्दर संकल्प विकल्प नहीं उठते। फिर आगे जोति के देखने का स्थान आ जाता है।

पचरंगी फुलवारी निरखो।

दीन दान घट भीतर परखो।।

इससे आगे है पचरंगी फुलवारी। वह क्या है? जो इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स पैदा होते हैं वह तरह तरह की रचना करते हैं। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश यह सब स्थूल प्रकृति है। इन तत्वों के हर एक के अलग अलग रूप हैं। उनके रंगों का नाम पचरंग फुलवारी है। मिट्टी का रंग पीला होता है। जल का रंग नीला होता है। अग्नि का रंग सफेद होता है। ऐसे ही इन तत्वों के रंग हैं। जब मनुष्य उस स्थान पर जाता है तो उसके अन्तर पांच रंग की फुलवारी होती है मगर वह कहते है कि इसमें फँसो नहीं। आगे जोति को देखो। दीपक जलता है। उस जोति के दर्शन करो। वह है ज्योति स्वरूप। यह तो तुम्हारे अन्तर का जोति स्वरुप है। एक बाहर का ज्योति स्वरूप है। उसके भी इलैक्ट्रोन्स हैं और तुम्हारे अन्तर के जोति स्वरूप के भी इलैक्ट्रोन्स हैं। तुम्हारे अन्तर जो ज्योति स्वरूप है उसमें भी इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स निकल रहते हैं जिससे तुम्हारा शरीर बनता है। यदि दिमाग में तनिक भी फितूर या खराबी आ जाये तो उसका प्रभाव दिमाग के सैल्स पर होता है कि कहीं लकवा हो जाता है और कही टांग नहीं चलती है। इसलिये जोति

स्वरूप के दर्शन करो।

कोई दिन ऐसी लीला देखो।

नील चक्रता आगे पेखो।।

कुछ दिन वहां ठहर कर जोति स्वरूप के दर्शन करो। यहां नीले रंग का प्रकाश भी होता है।

विरह प्रेम वल ताको फोड़ो।

जोति निहारो मन को मोड़ो।।

वहां तो तब जाओगे जब तुमको अपने घर जाने की आवश्यकता होगी। किसी गुरु के आगे परमात्मा के आगे रोने से तुम उस घर नहीं पहुँच सकते। यह रोना धोना और प्राार्थना करना, मत्था टेकना निर्बलता की निशानी है मगर इससे भी एक प्रकार का सहारा मिलता है लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं कि बाबा जी हमको वहाँ पहुंचा दो। यह सब जीव अबल निबल और अज्ञानी है। यदि इस तरह मत्था टेकने से या प्रार्थना करने से किसी को कुछ मिल जाता तो दुनिया तर जाती। इस प्रार्थना से तो तुम्हारे मन को शान्ति मिलेगी। तुमको ब्रह्मा, विष्णु और महेश की शक्ति से थोड़ा सा आनन्द मिलेगा। मगर भवसागर से पार नहीं जा सकते मैं यहां धन इकट्ठा करने को नहीं आया। मैं आया हूँ इस दुनिया में अपने घर जाने के लिये।

यह रामसेवक ग्वालियर से दौड़ा हुआ आया है। तुम केवल इसी बात से मुझे गुरु मानते हो ना कि मेरा रूप तुम्हारे अन्तर प्रगट हुआ जब तुम मुझे जानते भी न थे। मैं तो तुम्हारे अन्तर गया नहीं। यह सब विराट पुरुष का खेल है। रेडीयेशन और इन्डक्शन का खेल है। हर एक आदमी की रेडीयेशन इस संसार रहती है जैसे मैंने आपको तार का उदाहरण दिया था। तो सतपुरुषों की रेडीयेशन दूर तक जाती है। वह ब्रह्माण्ड में रहती है। जहाँ जिसको उस वस्तु की आवश्यकता होती है तो वह रेडीयेशन बनाकर जाती है। मैं नहीं जाता हूँ। यह जो रेडीयेशन है यह माँग और पूर्ति (Demand and Supply) का सवाल है। जहां जिस प्रकार की मांग होती है वहां उसी प्रकार की रेडियेशन उसके अन्तर उसका काम करती है। जो दस

नम्बर के बदमाश होते हैं या ठग होते हैं वह जब ठगी करना चाहते हैं तो बड़े बड़े ठग चोर डाकू हो गये हैं उनकी रेडीयेशन जो ब्रह्माण्ड में मौजूद है, वह उनके अन्तर दाखिल होकर उनको ठगी में कुशल बना देती है। जो ज्ञान मैं देता हूं उसकी तो कोई कद्र नहीं करता, दुनिया तो अज्ञान में फँसी हुई है।

गुरु से ज्ञान जो पाइये, शीश दक्षिणा दे।

वह शीश है अपने अहंकार को तोड़ना। इस प्रकार साधन करके फिर आगे जोतिस्वरूप के दर्शन करो।

अनहद घंटा सुन सुन रीझो।

शंख बजाओ रस में भीगो।।

वह अनहद घंटा कैसे बजेगा? घंटा कैसे बजता है? उस जोति स्वरूप में स्थूल पदार्थ (माद्दा) पैदा करने के अणु मौजूद हैं। जिस तरह हम बाहर में घंटा बजाते हैं, बाहर की स्थूल धातुओं को इकट्ठा करके और जब उस पर हथौड़ा चलाते हैं तब घंटा बजता है इसी तरह अब तुम्हारी सुरत अन्तर में उस जोतिस्वरूप के ऊपर जायेगी, चूंकि जोति स्वरूप के अणुओं में स्थूल पदार्थ पैदा करने की शक्ति है जब वह इकट्ठी हो जायेगी तो वहां पर वैसे ही घंटा बजेगा जैसे तुम बाहर की स्थूल धातुओं को इकट्ठा करके घंटा में बजाते हो। यह है पहला स्थान। जब कुछ दिन इसका साधन हो जाये तो फिर आगे चलने की कोशिश करो। जब एक बार आदमी इस श्रेणी को पार कर जायेगा एक बार घंटा शंख की आवाज सुनकर आगे चल गया, तो फिर बार बार सुनने की आवश्यकता रही रहती, क्योंकि सुरत को इससे निकलने की स्वाभाविक आदत पड़ जाती है। जैसे एक सुरंग से तुम निकलना चाहते हो तो पहले हमको पता नहीं होगा और कष्ट होगा। जब एक बार बाहर निकल गया तो फिर कोई कष्ट नहीं होगा।

यह पहिला स्थान बताया।

राधास्वामी वरन सुनाया।।

हमको अपने घर पहुँचना है। अपने घर और उस घर पहुंचने के लिये रास्ते में मंजिलें है। आगे दूसरे स्थान या मंजिल का वर्णन होगा।

शब्द स्थान दूसरा

अब चलो सजनी दूसर धाम। निरखा त्रिकुटी गुरु का ठाम।।
ओंकार धुन जहँ विसराम।। गरजे बादल और घनश्याम।।
सूरज मंडल लाल मुकाम। गुरु ने बताया गुरु का नाम।।
पंचम वेद नाद यहि गाया। चहुँ दल कंवल संत बतलाया।।
घंटा शंख तजी धुनि दोई। गरज मृदंग सुनाई सोई।।
सुरत चली और खोला द्वार। बंकनाल धस हो गई पार।।
ऊंची नीची घाटी उतरी। तिलकी की उलटी फेरी पुतरी।।
गढ़ भीतर जाय कीन्हा राज। भक्ति भाव का पाया साज।।
करम बीज अब दिया जलाई। आगे को फिर सुरत बढ़ाई।।
नौबत झड़ती आठों जाम। सूरत पाया मूल कलाम।।
महाकाल और कुरम बखाना। उत्पत्ति बीजा यहां से जाना।।
सूरज चांद अनेकन देखे। तारा मंडल बहु विधि पेखे।।
पिंड अंड से न्यारी खोली। ब्रह्मण्ड पार चली अलबेली।।
वन और परबत बाग दिखाई। चमन–चमन फुलवारी छाई।।
नहरें नदियां निर्मल धारा। समुन्दर पुल चढ़ हो गई पारा।।
मेर सुमेर देख कैलाशा। गई सुरत जहें विमल विलासा।।
राधास्वामी कहत पुकारी। दूसर मंजिल करली पारी।।

जब मैं सन् १९०५ में संत मत में आया था तो यह वाणियां पढ़ा करता था। मन में एक लगन थी। इन श्रेणियों से गुजरना चाहता था। अब ८३ वर्ष का हो गया हूँ। जो कुछ इन श्रेणियों को मैंने समझा, पता नहीं वह ठीक है गलत। यदि स्वामी जी को अपनी वाणी रचने का अधिकार था जिसे हम लोग पढ़ पढ़कर पागल बन

गये तो मैं जो इन वाणियों को पढ़कर पागल बना रहा हूं, मुझे भी अधिकार है कि अपना अनुभव कह जाऊँ।

कल मैंने साइंस की रिसर्च के आधार पर कहा था कि इस विराट पुरुष की उत्पत्ति प्रकाश से होती है क्योंकि प्रकाश के हर एक अणु में इलैक्ट्रोन्स होते हैं और जब वह प्रोटोन्स से मिलते हैं तो यह स्थूल पदार्थ बनता है मगर वर्तमान विज्ञान यह सिद्ध करता है कि प्रकाश (Cosmic Rays) से होकर आता है। यह पता नहीं कि यह कौसमिक रेज वैज्ञानिकों ने कैसे देखे हैं। यह कौसमिक रेज क्या है? एक तो बाहर में और एक हमारे अन्तर में हमारी वासना है। सूक्ष्म प्रकृति का या मन का रूप है। उसके अन्तर आस है सूक्ष्म प्रकृति से यह प्रकाश और प्रोटोन्स और इलैक्ट्रोन्स निकलते हैं। जब मैं यह कहता हूं तो अपनी आत्मा से पूछता हूं कि तेरे पास क्या प्रमाण है? साइंस ने यह सिद्ध किया कि इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स जड़ या स्थूल पदार्थो को बनाते हैं। जब देवास के रहने वाले लड़के ने अपनी आस से मुझको पैदा करके परीक्षा हाल में मेरे रूप को मेज के नीचे बैठा कर उससे अपना साइंस का पर्चा हल करवाया मगर मैं नहीं था अथवा किसी ने नदी में डूबते हुये मेरा ख्याल किया और मेरे रूप ने उसे बचा लिया और मैं नहीं था, तो इससे मुझे यह सिद्ध हुआ कि जिस तरह कौसमिक किरणों से प्रकाश निकलकर इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स बनते हैं तो हमारे अन्तर में जो कौसमिक किरणें है वह हमारी आस है। यह दूसरी बात है कि जब मेरा रूप प्रगट हुआ तो दूसरे लड़कों ने उसे नहीं देखा मगर उस लड़के की आस प्रबल हुई होती तो वह दूसरों को भी मेरा रूप दिखा सकता था। इसलिये मैं त्रिकुटी के स्थान को साइंस के सिद्धान्त के अनुसार कौसमिक किरणों का भंडार या आस का भंडार समझता हूं। सूक्ष्म प्रकृति में जो वासना है हिन्दू शास्त्र इसको अव्याकृत कहते हैं। यह बात योग वशिष्ट में लिखी है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश संकल्प की दुनिया से पैदा होते हैं अर्थात ब्रह्मा, विष्णु, महेश संकल्प की सृष्टि के हैं और नीचे आकर ग्रास मेटर में विराट पुरुष में स्थूल रूप पृथ्वी हैं, पहाड़ हैं और पार्वती पृथ्वी के अन्तर उपजाऊ शक्ति है। दूसरे स्थान पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश सूक्ष्म प्रकृति रखते हैं और यही स्वामी जी कहते हैं:–

अब चलो सजनी दूसर धाम।

निरखो त्रिकुटी गुरु का ठाम।।

गुरु का धाम क्या है? तुम्हारे मन की जो शक्ति है, आस है, वासना है वासना का जो मैटर (पदार्थ) है वह दूसरे स्थान पर रहता है तुम्हारे अन्तर भी और बाहर भी जिस तरह कि देवास के रहने वाले उस लड़के ने अपने मन के अन्तर से वासना पैदा करके फकीर चन्द के स्थूल रूप को बनाया था। अब लोग इस बात का प्रमाण मांगते हैं। मैंने प्रमाण तो दे दिया। अब दातादयाल के शब्द का प्रमाण देता हूँ। :–

साधो यह मन समझन योग।।
मन ही ज्ञान और मन ही ध्यान है, मन ही मोक्ष और भोग।
मन में वेद को पढ़ते ब्रह्मा, शंकर करते योग।।
मन ही अन्दर सृष्टि व्यापी, मन ही में है रोग।
मन गोविन्द मन गोरख रूपा, मन ही योग वियोग।।
मन ही पानी मन ही अगिनी है, मन ही आनन्द सोग।
मन ही गुरु है मन ही चेला, मन ही ब्रह्म संजोग।।
मन ही का व्यवहार जगत में, नाहीं जाने लोग।।

दातादयाल का शब्द इस बात का प्रमाण है कि त्रिकुटी का स्थान या दूसरा स्थान तुम्हारे मन का है, सूक्ष्म प्रकृति का है और उसका गुण आस है। वहीं से ही ब्रह्मा सृष्टि रचता है। योग वशिष्ट को पढ़ो। वहीं से आकर देवता इस शरीर में जन्म लेते हैं। वह देवता कौन है? वह ऊपर की त्रिकुटी है, मन है, गुरु है। गुरु का स्थान है। वहां से आकर जन्म लेते हैं और हमारे अन्तर में हमारी आस के जो अणु है वह अपने ही संकल्प से स्थूल सृष्टि को रचते हैं जिस तरह कि यादराम ने या देवास वाले लड़के ने या ओ३म प्रकाश धर्मशाला वाले ने अपनी आस से मेरे रूप को बनाया। यह त्रिकुटी या स्थान गुरु का स्थान है। गुरु कौन है? गुरु है तुम्हारा अपना ही मन। स्वामी जी कहते हैं :–

अब चलो सजनी दूसर धाम।
निरखो त्रिकुटी गुरु का ठाम।।

ओंकार धुन जहां बिसराम।
गरजें बादल और घनश्याम।।
सूरज मंडल लाल मुकाम।
गुरु ने बताया गुरु का नाम।।

गुरु ने बताया गुरु का नाम – गुरु का नाम फिर क्या है? बाहर के गुरु का नाम बताया। वह है तुम्हारे मन का स्थान जिस तरह बाहर में इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स स्थूल माद्दा या पदार्थ को पैदा करते हैं इसी तरह इस स्थान से मन के अन्तर से सूक्ष्म प्रकृति की धारें निकलती रहती हैं। जब वह इकट्ठी हो जाती हैं तो जिस तरह इस दुनिया में समुद्र के पानी के अबखरात इकट्ठे होकर ऊपर जाकर और बादल बनकर गरजते हैं इसी तरह से इस मन की धारें इकट्ठी होकर बादल की तरह या मृदंग की तरह, कोई इसे बम–बम कह देता है, कोई ओ३म् ओ३म् कह देता हैं, मुसलमान इसको अल्लाहू कह देते हैं, गरज पैदा करती है। मन के इकट्ठा होने के कारण यह बादल की गरज का शब्द होता है। मैं ऊँचा चला गया हूं। मुझे इन स्थानों से कोई प्रयोजन नहीं रहा। क्यों? क्योंकि मुझे यह ज्ञान हो गया कि मेरा रूप लोगों के अन्तर जाता है और मैं नहीं होता। इस ज्ञान से वह जो त्रिकुटी का आकर्षण था और मैं उस स्थान को देखने की इच्छा किया करता था वह समाप्त हो गया, अब मेरा साधन मत के ऊपर चला गया। आत्मा के ऊपर चला गया और परमात्मा से ऊपर चला गया तथा ब्रह्माण्डों से ऊपर चला गया। चूँकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा इसलिये कहता हूँ कि इस स्थान तक जाने के लिये मन को इकट्ठा करके और उसके खेलों को देखने के लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य केवल किसी विशेष गुरु का ही ध्यान करे यह तो अज्ञानी जीव को विश्वास दिलाने के लिये और मन को इकट्ठा करने के लिये रूप का ध्यान बताया जाता है। असली रूप का ज्ञान जो तुम्हारा मन है। शुरु में चाहे राम के रूप में, चाहे कृष्ण के रूप से, चाहे देवी के रूप से, चाहे फकीर दातादयाल या या और किसी रूप से पहुंचो। इस अज्ञान के होने का कारण यह जितने धर्म सम्प्रदाय वाले हैं यह अपने – अपने गुरुओं की प्रशंसा करते हैं कि हमको बाबा फकीर ले गया, बाबा सावनसिंह ले गये या राम कृष्ण ले गये। ऐ भारत के धार्मिक जगत के

लोगों! इस अज्ञान ने तुमको पक्षपाती बना दिया। तुम किसी का रूप ध्यान करके जिससे प्रेम हो, तुम अपने अन्तर में त्रिकुटी की अवस्था पैदा करके अपने मन को इकट्ठा करके जो तुम्हारी सूक्ष्म प्रकृतियों के ब्रह्मा, विष्णु और महेश हैं उनको इकट्ठा करके अपने अन्तर करके अपने अन्तर उस धुन को सुन सकते हो जिसका नाम ओंकार है, ओ३म है। उस ओ३म से ही रचना होती है। चूँकि तुम्हारी वृत्तियां इकट्ठी हो जाती हैं उसके इकट्ठा होने का कारण उसमें प्रकाश पैदा होता है। चूँकि मन की वृति का इकट्ठा होने के कारण जोर लगता है इसलिये लाल रंग का सूर्य और लाल रंग का प्रकाश दिखाई आता है। तब ही तो मैं कहता हूं कि हर सम्प्रदाय और पंथ वालों ने अपनी वाणी को रोचक बनाया ताकि लोग उसकी ओर खिंच जावें और उसी धर्म पंथ के अनुयायी बन जावें। राधास्वामी मत में यदि कोई बड़प्पन है तो उस गुरु का नहीं है। जिसका रूप तुम्हारे अन्तर में प्रगट होता है वह तो तुम्हारा अपना ही मन है। यदि बड़प्पन है तो उस बाहर के गुरु का है जो उस स्थान का पता देता है। यही इस वाणी में लिखा है:-

सूरज मंडल लाल मुकाम।
गुरु ने बताया गुरु का नाम।।

इसलिये राधास्वामी मत में बार बार कहा जाता है कि पूर्ण गुरु की खोज करो जो तुमको भेद और असलियत बता दे। यही एक भेद था जो हुजूर महाराज को मिला था। यहां गुरु का स्थान है। सतगुरु इससे आगे रहता है। गुरु तुम्हारे मन का स्थान है। तुम्हारे मन का रूप है। मैंने ऐसा समझा है।

पंचम वेद किसे कहते हैं? यह तो स्वामी जी को ज्ञात होगा कि उनका इससे क्या भाव है। मैंने यह समझा है कि वेद नाम है ज्ञान का। वेद चार हैं- ऋगवेद, सामवेद, यजुर्वेद, अर्थवेद। इनमें ज्ञान ही भरा हुआ है। तो जिस स्थान से यह ज्ञान निकलता है वह स्थान है तुम्हारे मन को एकाग्रता का नाम। जिस नुक्ते से यह ज्ञान पैदा होता है उसका नाम मेरी समझ में पंचम वेद है। आगे कहते है-

घंटा शंख तजी धुनि दोई।
गरज मृदंग सुनाई सोई।।

जो पहिले स्थान या विराट पुरुष का शब्द था वह अब छूट गया और अव्याकृत का देश आ गया। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार अव्याकृत के दर्शन करने से यहां जो शब्द होता है। कोई उसे बादल की गरज से उपमा देते हैं कोई मृदंग की आवाज के समान बताते हैं। कोई उसको बम-बम कहता है। कोई उसको वाहे गुरु के नाम से स्मरण करता है। वास्तव में जो तुम्हारे मन से सूक्ष्म प्रकृति की धारें निकलती है अर्थात कौसमिक किरणें जो नीचे आकर प्रकाश बनाती हैं जिसमें से इलैक्ट्रोन्स निकलते है यह वह स्थान है।

सुरत चली और खोला द्वार।
बंकनाल धस हो गई पार।।

अब जो वस्तु अन्तर में रहती हुई इस इलैक्ट्रोन्स व प्रोटोन्स के खेल को देखती थी स्थूल प्रकृति का और जो वस्तु मन में रहती हुई मन के खेल को देखती है, सूर्य को अपने अन्तर देखती है वह है सुरत, वह है असली फकीरचन्द। उसने जा करके द्वार खोला। किसका? इस ओ३म के स्थान का। कैसे खोला? बंकनाल में धँस कर। बंक नाल कहते हैं टेड़े रास्ते को अर्थात पहिले कुछ नीचे आना और फिर ऊपर आना। जाग्रत की जो चेतनता या देह का भान था उनमें गुनूदगी आजाती है, वह छूट जाते हैं। गुनूदगी आने का अर्थ यह है कि वह नीचे आती है और फिर गुनूदगी को छोड़ कर या बेहोशी को छोड़कर फिर वह मन की चेतनता में चली जाती है। नीचे जाना और फिर ऊपर आना। उस अवस्था का नाम है बंकनाल। जैसे रात को तुम सोने लगते हो। तो एक बार तुमको बेहोशी आती है। जाग्रत और स्वप्न के बीच एक बेहोशी आती है, गुनूदगी आती है। उसके बाद तुम्हारा मन जो है वह अपना खेल स्वप्नावस्था में करता है। यह स्थान तुम्हारी आस होगी वैसी ही रचना इस त्रिकुटी में बनाओगे। फिर स्थूल शरीर पर वैसा ही प्रभाव होगा। इसका प्रमाण? समाचार पत्रों में कुछ समय पहले पढ़ा था कि विलायत में डाक्टरों ने विचारों की शक्ति के परीक्षण किये हैं। उन्होंने दो कमरे लिये। उनमें से एक कमरे को बिल्कुल कीटाणु रहित कर दिया और दूसरे कमरे में हैजा, प्लेग, टी० बी० या और किसी तरह के कीटाणु भर दिये। दो कैदियों को बुलाया जिनको मृत्यु की या और कोई सजा दी थी। यह दोनों कैदी विचार की शक्ति के परीक्षण के लिये बुलाये गये थे।

जो कीटाणु रहित कमरा था उसमें एक कैदी को रखकर उससे कहा गया कि यह कमरा विभिन्न प्रकार के खतरनाक कीटाणुओं से भरा हुआ है तुम यहां रहो, तुमको यह सजा है। दूसरे कमरे में जो खतरनाक कीटाणुओं से भरा हुआ था दूसरे कैदी को रखा। उससे कहा गया कि यह कमरा कीटाणुओं से रहित है। दोनों को वह विचार दे दिये गये। रात बीतने पर अब सुबह को देखा तो वह कैदी कीटाणु रहित कमरे में था वह मरा हुआ था क्योंकि उसके यह ख्याल दिया गया था कि उस कमरे में कई प्रकार के खतरनाक कीटाणु हैं। दूसरा कैदी जो कीटाणुओं से भरपूर था वह बिल्कुल स्वस्थ था क्योंकि उसको ख्याल दिया गया था कि यह कमरा बिल्कुल स्वच्छ है। यह साइंस का प्रमाण है कि त्रिकुटी के स्थान पर अर्थात तुम्हारे मन के अन्तर जिस प्रकार की आस होती है, जिस प्रकार का ख्याल होगा उसके अनुसार मन की कौसमिक किरणें प्रकाश बनाकर उसमें से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स बनायेंगी। क्या यह प्रमाण नहीं है कि मन के अन्तर में जिस प्रकार का विचार तुम्हारा होता है वही विचार स्थूल रूप धार लेता है। इसलिये मैं कहना चाहता हूँ कि ऐ मानव जाति! तुम्हारे जीवन में जो कुछ तुमको मिलता है वह इस त्रिकुटी के स्थान से ही मिलता है। जैसा तुम्हारा विचार है, जैसी तुम्हारी आन है जैसा तुम्हारा विश्वास है उसके अनुसार तुम्हारे ख्याल का प्रभाव है। यदि प्रबल है तो वह जो इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स जो स्थूल पदार्थ बनाते हैं वह तुम्हारी आस के अनुसार बनायेंगे जो तुमने उस दूसरे स्थान से निकाले हैं। मुझे दातादयाल कहा करते थे कि जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी मति वैसी गति, जैसी करनी वैसी भरनी। इसलिये हिन्दू शास्त्रों ने शुभ संकल्पमस्तु का ख्याल जीवों को दिया था। मन कर्म से आशावादी बने रहो। अपने आपको शोधो और पवित्र रखो। यह दूसरा स्थान है। मुझ पर गुरु ऋण था। मेरा अपना कर्म था। मैंने ८३ वर्ष इसी खब्त में खो दिये। मेरी समझ में यह बात आई है। यह दावा नहीं करता कि जो कुछ मैं कहता हूं वही ठीक है। वही बात स्वामी जी कहते हैं, वही शास्त्र कहते हैं और वही साइंस सिद्ध करती है। इसलिये मानव जाति अपना कल्याण चाहती है तो चाहिये कि इस ओंकार के स्थान पर ठहरे उसकी आशाओं को जैसी जैसी जिसकी आशा है यह ओंकार का स्थान उसकी सहायता करेगा। यदि कोई अपने घर जाना चाहता है तो

उसकी सहायता भी यह ओंकार का स्थान करेगा यदि कोई दुनियां की उन्नति चाहता है तो उसकी सहायता भी यह ओंकार का स्थान करेगा।

इसलिये हिन्दू शास्त्रों ने ओ३म को बड़ा भारी महत्व दिया है। हर जगह ओ३म की महिमा है। ओ३म भू, ओ३म भुव, ओ३म मह: ओ३म जन: ओ३म तप: ओ३म सत्यम्। ओ३म की महिमा क्यों है? क्योंकि यह कुञ्जी है। किसकी? दुनिया में जीवन बनाने की और असली घर आध्यात्मिक मंजिलों में जाने की। यह मेरा अनुभव है। इसलिये ओ३म की महिमा है। दुनियां केवल ओ३म ओ३म करना जानती है। दुनियाँ को ओ३म के अर्थ ज्ञात नहीं हैं। जिस आस और श्रद्धा को लेकर तथा जिस वासना को लेकर तुम अपने में विराट पुरुष को छोड़कर अव्याकृत अर्थात त्रिकुटी के रूप में आकर ओंकार के स्थान पर जाओगे तो तुम्हारी उस आस के अनुसार तुम्हारा जीवन बनेगा। यह है जो मेरी समझ में आया है।

ऊँची नीची घाटी उतरी।

तिलकी उलटी फेरी पुतरी।।

इस ऊँची नीची घाटी से स्वामीजी का क्या अभिप्राय है मुझे पता नहीं। मैं यह समझता हूँ कि मनुष्य के अन्दर जो सकंल्प या विचार उठते हैं यह कभी ऊँचे जाते हैं कभी नीचे। इस ऊँच नीच पने का साधन करके उसको समाप्त करके एक जगह ठहर जाना है। यह है ऊँची नीची घाटी उतरी। जब कोई ऐसा करेगा तो उसकी आँखों की पुतली स्वाभाविक ही ऊपर चढ़ जायेंगी। जैसे आज सुबह जब मैं अभ्यास से उठा तो मेरी आँखें नहीं खुलती थीं, क्योंकि मेरी आँख की पुतली ऊपर चढ़ी हुई थी। यह पुतली क्यों चढ़ी? क्योंकि मेरी सुरत त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न से ऊपर चली गई थी? जिसकी सुरत ऊपर जाती है उसकी पुतली स्वयंमेव चढ़ जाती हे। कई आदमी जोर देकर अभ्यास के समय पुतली को बदलना चाहते हैं। ऐसे करने वाले कहते हैं कि सिर में दर्द होने लग गया। पुतली को आप नहीं पलटना चाहिये पुतली स्वयं ही पलट जायेगी। जो आदमी पुतली को आप उलटना चाहते हैं वह कोई न कोई कष्ट मोल लेते हैं। प्रेम के वेग में पुतली स्वयंमेव चढ़ जाती है। यह एक स्वाभाविक बात है। यह मैं इसलिये कह रहा हूं कि कितने ही सत्संगी ऐसे हैं जो पुतली को उलटने की कोशिश करते हैं। वह अपने

अन्तर आगे जाने की आस तो रखते नहीं, अपने अन्तर प्रेम तो करते नहीं, अपने अन्तर प्रेम तो करते नहीं मगर पुतली को उलटने की कोशिश करते रहते हैं। उनके सिर में दर्द हो जाता है और कोई न कोई रोग हो जाता है, दिमाग खराब हो जाता है। पुतली तो स्वाभाविक ही उलटती है।

ऊँची नीची घाटी उतरी।

तिलकी उलटी फेरी पुतरी।।

जो आदमी अभ्यास करना चाहे उसको एक बात कहता हूं कि सच्चे बनो। जो कुछ चाहते हो उसकी लगन रखो। तुम्हारा काम स्वयं हो जायगा। यदि परमार्थ चाहते हो तो सच्चे बनकर चाहो। दुनिया की कोई वस्तु चाहते हो तो सच्ची लगन से चाहो। यह प्रकृति का कानून है। माँगो और मिलेगा। दरवाजा खट खटाओ, खुलेगा।

मालिक के दरबार में, कमी वस्तु की नाहिं।

बन्दा मौज न पावहीं, चूक चाकरी मांहि।।

चाकरी में गलती है। तरीका नहीं आता।

गढ़ भीतर जाय कीना राज।

भक्ति भाव का पाया साज।।

अपने अन्तर जाकर राज पा लिया। राज का अर्थ है सिंहासन पर बैठ जाना अर्थात् जब मन इकट्ठा हो जाता है तो मन को शान्ति मिल जाती है। वहां वह राज करता है। यह रामायण क्या है? राम दशरथ का पुत्र है, बच्चा है जो तुम्हारे अन्दर उत्पन्न होता है। यह मन बच्चा है। जब इसको शान्ति मिल जाती है सीता हर ली जाती है। कौन हरता है? रावण? रावण क्या है? रजोगुणी वृतियों का नाम रावण है। जहां दशरथ है वहां दसशीश वाला भी है। यह शरीर दस इन्द्रियों वाला है और रजोगुण है रावण वह दस शीश वाला है। वह उसकी शान्ति को भंग कर देता है। फिर राम लंका पर चढ़ाई करके वह रावण को मारता है कैसे मारता है? वह मन जो तरह तरह के विचार उठाता है और उसको अशान्ति देता है। उसको मारकर फिर अयोध्या में राज करता है। अयोध्या देह है। जब मन की शान्ति किसी को मिल जाती है तो फिर बहुत से लोग आगे जाना नहीं चाहते। वह मानसिक शान्ति में ही

रह जाते हैं। मन से आगे जाने के लिये आत्म पद है।

कर्म बीज अब दिया जलाई।

आगे को अब सुरत बढ़ाई।।

कर्म बीज–कर्म किसका नाम है। कर्म जब भी होगा तुम्हारी वासना या इच्छा से होगा। जब मन दौड़ दौड़कर ऊँची नीची घाटी चढ़ कर शान्त हो गया तो आस समाप्त हो गई। उसका जी मचल गया। मन की शान्ति का नाम है त्रिकुटी का स्थान। इस मन से धारें निकल कर हमारी सृष्टि को रचती हैं। जिन्होंने आगे जाना होता है उनके लिये आगे की मंजिल है।

नौबत झड़ती है आठों याम।

सूरत पाया मूल कलाम।।

वह मन जो वहां पर जाकर एकाग्र होता है और वहां जो आवाज पैदा होती है उसको कहते हैं मूल कलाम। वहां जाकर सुरत विश्राम करती है। मूल को पा लेती है।

महा काल और कुरम बखाना।

उत्पति बीजा यहां से जाना।।

उत्पति बीजा – रचना करने का जो बीज है, ओ३म् के ऊपर जो बिन्दु है, वहाँ से इस सृष्टि की रचना होती है। वहाँ से कौसमिक किरणें निकलती हैं। उनमें से प्रकाश निकलता है और वह प्रकाश विराट पुरुष को बनाता है।

सूरज चांद अनेकों देखे।

तारा मंडल बहुविधि पेखे।।

चूँकि रचना होती तो ऊपर की रचना से फिर सूर्य, चन्द्रमा सितारे बनते हैं।

एकौ माई जगत व्यापी, तिन चेले परवान।

वहां से चूँकि रचना होती है उसकी, तो उसका प्रतिबिम्ब हमारे दिमाग पर भी होता है और हमारे अन्तर भी कभी सूर्य कभी चन्द्र सितारे दिखाई आते हैं। जब बिन्दु के ऊपर सुरत ठहर जाती है तब सूर्य चन्द्र सितारे दिखाई नहीं आते।

पिंड अंड से न्यारी खेली।

ब्रह्मण्ड पार चली अलबेली।

पिंड शरीर और ब्रह्मण्ड तुम्हारा मन है। सुरत पिंड और अंड से पार हो जाती है। यह जितना ब्रह्मण्ड बनता था यह तुम्हारे संकल्प से बनता था। सुरत अब उससे पार हो गई।

वन और पर्वत बाग दिखाई।

चमन चमन फुलवारी छाई।।

मैं कहता हूँ कि कई पुरुष अलंकार रूप में किसी बात की शोभा वर्णन करते हैं ताकि लोगों में उत्साह पैदा हो जाये। मैं कभी कभी हँसी में कहा करता हूँ जैसे कि सब लोग रेडियो सुना करते हैं कि–

मैं तारियाँ दे बुन्दे पाऊँगी।

चन्द दा मैं टिक्का लाऊँगी।।

सूरज दा मैं हार पाऊँगी।

हवा दी मैं चुन्नी लाऊँगी।

मैं यार नूं मनावन जाऊँगी।।

यह सब कविता के रूप हैं। उस यार की चाह को बढ़ाने के लिये एक वर्णन शैली है। इसी प्रकार यह वर्णन शैली है जीवों को अपने अन्तर ले जाने के लिये, उत्साहित करने के लिये कि वह इस भावना में आकर अपने अन्तर अभ्यास और साधन करें। मैं इसका यह अर्थ समझता हूँ। सम्भव है स्वामी जी का कोई और भाव हो। मैं स्वयं इन रोचक और वाणियों में फँसा रहा। बारह – बारह घंटे अभ्यास किया। यदि स्वामीजी होते तो उनसे पूछता कि आपने यह वाणियां रच दीं। लाखों जीव इस मत में शामिल हो गये। क्या उनकी इस जीवन में कुछ मिला? मेरी तो आँख केवल एक बात से खुल गई कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। बस! मुझे यह निश्चय हो गया कि जो कोई भी मेरे रूप को देखता है या प्रकाश में देखता है और मैं होता नहीं तो यह क्या है? वह उस मनुष्य का अपना ही मन है। और कुछ नहीं। उस मन के चक्र में आकर हम गुरुओं के आगे हाय हाय करने लग जाते हैं। यदि अच्छी बात हो जाये तो खुशी से नाचने लगते हैं। हमारे दुख और सुख का

कारण हमारा ओंकार बना हुआ है।

नहरें नदियां निर्मल धारा।

समुन्दर पुल चढ़ हो गई पारा।।

नहरें नदियां क्या है? हमारे मन के अन्तर के भाव विचार हैं। तुम अभ्यास करते हो। अपने मन को देखा करो। तब तुमको पता लगेगा कि तरंगे उठती हैं कि नहीं उठती। जिस समय वह निर्मल हो जाती हैं वह त्रिकुटी के स्थान से पार हो जाता है–

जब मन आनन्द में आ जाता है जैसे शरीरान्द, प्राण आनन्द, ज्ञान – आनन्द, मन आनन्द, विज्ञान आनन्द, आत्म आनन्द तो वहां चला जाता है और मन आनन्द में मगन हो जाता है। उसको बोलते है विलास। विलास कहते हैं खुशी को अर्थात वहां मन प्रसन्न हो जाता है।

राधास्वामी कहत पुकारी।

दूसर मंजिल करली पारी।।

दूसरी मंजिल कब पार होती है? जब मनुष्य का मन देह को भूल कर और अपनी हर प्रकार की आशाओं को छोड़कर ऊँची नीची घाटी गुजरने के बाद और यह दृश्य देखने के बाद शान्त हो जाता है। इस स्थान पर जाकर दूसरी मंजिल पूर्ण

हो जाती है। इससे आगे आत्मा की बारी आती है।

शब्द स्थान तीसरा

अब चली तीसर पर्दा खोल। सुन्न मंडल का सुन लिया बोल।।
दसवाँ द्वार तेज परकाश। छोड़े नीचे गगन अकाश।।
मान सरोवर किये अश्नान। हंस मंडली जाय समान।।
सुन्न शिखर चढ़ी सूरत घूम। किंगरी सारंगी डाली घूम।।
सुन सुन सुरत हो गई सार। पहुंची जाय त्रिवेनी पार।।
महा सुन्न का नाका लीन्ह। गुप्त भेद जाय लीन्हा चीन्ह।।
अंध घोर जहँ भारी फेर। सत्तर पालंग जा का घेर।।
बानी चार गुप्त जहँ उठती। सुरत रागिनी नइ नइ सुनती।।
झन्कारें अद्भुत कहा बरनूँ। सुन सुन धुन मन में अति हरषूँ।।
पांच अंड रचना तहँ कीन्हीं। ब्रह्म पांच तामें हुये लीनी।।
अंडन सोभा बरनूं कैसी। सब्ज सेत कोई पीत बरन सी।।
लख लख अरब तासु परमाना। यह अंडा अति तुच्छ दिखाना।।
या में ब्रह्म व्यापक जोई। ताकी गति कहो कितनी होई।।
ताका ज्ञान पाय यह ज्ञानी। फूलें मन में होय अभिमानी।।
मेंढक सो गति इनकी जानी। कूप समुद्र जान मगनानी।।
कहा करें यह है लाचार। वह तो देश न देखा सार।।
बिन देखे कैसे परतीत। उन नहिं जानी अचरज रीत।।
इसी ब्रह्म को जान अपार। भूले मारग करें विचार।।
अब इनको कैसे समझाऊँ। वह नहिं मानें चुप्प रह जाऊँ।।
राधास्वामी कही सुनाय। तीनों परदे दिये दिखाय।।

यह तीसरा स्थान है। मैं शब्दों की ओर नहीं जाता। मैं अपने जीवन को देखता हूँ। कल मैंने कहा था कि जब यह मन अपने रजो गुणी विचारों को छोड़कर शान्त हो जाता है अर्थात जो सीता रूपी शान्ति है वह मिल जाती है, फिर अयोध्या

नगरी अर्थात देह में रहता है। मन की शान्ति प्राप्त करने के बाद भी मन की एक विशेष दशा होती रहती है। वह अपनी शान्ति बखेरना चाहता है और दूसरों को अपनी आधीनता में लाना चाहता है। यह मनुष्य का एक स्वाभाविक गुण है। मनुष्य का मन जब ऐसा करना चाहता है तो उस मन की जो शान्त अवस्था है जिसको वह फैलाना चाहता है वह उसमें ठहर नहीं सकता। यह बात मैं अपने क्रियात्मक जीवन की बाबत अनुभव से कह रहा हूँ। तुम्हारे मन में बुरे विचारे नहीं उठते। तुम्हारा मन चंचल नहीं है। मन को शान्ति है मगर उस शान्ति में से दुविधा या अशान्ति उठती रहती है। हर एक आदमी अपनी दशा को देखे। रामायण में भी यही लिखा है कि राम रावण को मारकर सीता को ले आये, राज स्थापित करने के लिये यज्ञ किया, घोड़ा छोड़ा ताकि जो दूसरी प्रजा है वह उनके वश में रहे। अश्वमेघ यज्ञ किया। उससे पहिले अपने को मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने के लिये सीता को वनवास दिया। इसका क्या अभिप्राय? हमारा मन जो शान्त होता है उस मन ने अपने बुरे विचारों को छोड़ दिया। रजो गुणी विचार हमसे छूट गये और सतोगुणी रह गये। इस सतोगुणी भाव में भी अशान्ति उत्पन्न होती है। रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण यह तीनों डाकू है। रजोगुण और तमोगुण तो मनुष्य को बहुत दुख देते हैं यह सुरत को और शान्ति को लूटते हैं। सतोगुण कष्ट नहीं देता मगर यह भी डाकू है। यह क्रियात्मक अंग (अमली पहलू) है। मैं अपनी रहनी को देखता हूं। तुम बुराई कुछ नहीं करते, किसी का बुरा नहीं करते। तुम्हारा मन तुम्हारे साथ है मगर उसमें फिर भी विशेष होता है। यह रहनी है। तो पहिला स्थान विराट का, दूसरा अव्याकृत का। अब तीसरा आया हिरण्यगर्भ का। वह मन फिर भी शान्ति को प्राप्त करना चाहता है। सतोगुणी भाव में तुम कितने ही भले क्यों न हो, मन में कोई बुराई नहीं है। बुराइयों को छोड़कर देखो कि तुम्हारे मन में क्या आता है। फिर भी किसी न किसी समय अशान्ति आ जाती है। उस अशान्ति को दूर करने के लिये फिर मन खोज करता है। फिर वह ओ३म के जो मानसिक विचार उठते थे उनको बिल्कुल समाप्त कर देना चाहता है ताकि यह मन रहे ही नहीं। फिर क्या होता है? जिस तरह गहरी नींद में तुम्हारा मन नहीं रहता, इसी तरह साधना के समय में ओ३म को छोड़कर ओ३म के बिन्दु में समा जाता है। यही शास्त्र कहते हैं। वह बिन्दु वह

अवस्था है वह अंडाकार है। उसका नाम है हिरण्यगर्भ। तुम्हारे मन के अन्दर इसका नाम कुछ और रखा हुआ है। शास्त्र ने बाहर में उसका नाम हिरण्यगर्भ रखा हुआ है। विराट और अव्याकृत से जब सूरत उसमें चली जाती है उस अवस्था का इस तीसरे स्थान में वर्णन है।

अब चलो तीसर पर्दा खोल।

सुन्न मंडल का सुन लिया बोल।।

सुन्न मंडल – सुन्न किसे कहते हैं? एक आदमी बोलता नहीं हैं उसको कहते हैं कि तू सुन्न हो गया, इकट्ठा हो गया। बात ही नहीं करता। यह तो बाहर का सुन्न है। मन का किसी प्रकार की फुरना न करना सुन्न है चूँकि मन सूक्ष्म प्रकृति है, वहां जो धुन होती है उसको कहते हैं सुन्न मंडल का बोल। वहाँ रारंग सारंग–सारंगी की धुनि होती है। सारंगी क्यों बजती है? सारंगी के तार जब खिंच जाते है, तन जाते हैं और जब इन पर गज चलता है तब आवाज पैदा होती है। इसी तरह मन की कुल वृतियों को छोड़ने के बाद चूँकि मन के सब तार खिंच जाते हैं वहां पर जो साधक अभ्यास करता है उसकी रारंग सारंग या सारंगी की आवाज के समान धुनि होती है। यह मेरा साधन जब छूट गया। यदि यहां साधन करना चाहूँ तो नहीं कर सकता। क्यों? क्योंकि वह जो मन के भाव (जज्बे) थे वह उसी समय इकट्ठे होते थे जब मैं भाव और विचारों को सच मानता था। बुराई भलाई के, गुरु रुप के ध्यान के या भक्ति के या दातादयाल के प्रेम के मन के भाव विचार उठते तब ही तो मैं उने पास जाया करता था और उन भाव विचारों को सत मानता था। अब मुझे ज्ञान हो गया। जो रूप तथा तमोगुण, रजोगुण, सतोगुण हैं। अब केवल प्रकाश और शब्द है। ऊपर प्रकाशरूपी सतगुरु मुझको मिल गया। राधास्वामी मत की पुस्तकें कहती है कि दसवें द्वार से आगे सतगुरु मिलता है। सतगुरु दातादयाल या हुजूर महाराज का चेहरा नहीं है। वह है केवल शब्द स्वरूपी सतगुरु। वहां तक पहुंचने में इस महासुन्न से निकलने में बाहर का सतगुरु सहायता करता है।

इस एक ख्याल ने कि मेरा रूप दूसरों में प्रगट होता है और मैं नहीं होता मैं महासुन्न से निकला। मैं तीसरे स्थान का वर्णन कर रहा हूँ इसलिये कहता हूं कि जब तक मनुष्य को यह ज्ञान नहीं होता। यदि मेरे पास से सुनकर किसी को बुद्धि

ज्ञान हो भी जाये, तो भी उसको साधन करने में कठिनाई होगी। जब तक कि वह सहसदल, त्रिकुटी का और सुन्न का साधन किये हुये नहीं होगा, उसके अन्तर में वह शब्द या वह प्रकाश प्रगट हो ही नहीं सकता।

हीरा सिंह! तुम अभ्यासी हो। अपनी रहनी को देखो। क्या अभ्यास में तुम्हारे अन्तर संकल्प या विचार नहीं उठते। अभ्यासियों के अन्तर मन की अच्छी तरंगे उठेंगी। बुरी नहीं उठेंगी। वह जो प्रेम और भक्ति की अच्छी तरंगे उठेंगी, उनको भी तब तक मनुष्य छोड़ नहीं देगा तब तक वह आगे के स्थान या श्रेणी पर नहीं जा सकता। उनको छोड़ने के लिये क्या करना चाहिये? अपने अन्तर ओ३म को छोड़ कर ओ३म की बिन्दु में जाकर लय हो जाओ। उसका नाम है तीसरा पर्दा।

दसवाँ द्वार तेज परकाश।

छोड़े नीचे गगन आकाश।।

जब मनुष्य दसवें द्वार के अन्तर चला जाता है तो वहां चन्द्रमा का प्रकाश होता है। इसको मानसरोवर कहते हैं। मानसरोवर साधारणरूप से जल स्थान को कहते हैं। मन का सरोवर। सरोवर कहते हैं तालाब को। वह स्थान जहां मन की समस्त लहरें इकट्ठी हो जाती है उसको मानसरोवर कहते हैं। खोपड़ी के ऊपर जब प्रेम के भाव में सुरत ऊपर चढ़ती है पहिले स्थानों से गुजरती रहती है, आनन्द लेती रहती है। त्रिकुटी में साधन करने से मन को शान्ति मिल जाती है। जिस तरह राम को अयोध्या में आ जाने के बाद फिर अपने को मर्यादा पुरुषोत्तमपने को स्थित रखने के लिये सीता को घर से निकाल देने और यज्ञ करके कुल संसार पर राज्य करने के लिये विवशता हुई, इसी तरह यह मन शान्त हुआ हुआ। अपनी शान्ति को फैलाना चाहता है मगर वह फैलती नहीं है क्योंकि वह सतोगुण है। उसमें सतोगुणी वृति रखता हुआ आदमी भी आशान्त होता रहता है। यह क्रियात्मक जीवन का पाठ है। उस समय वह सुरत को ऊपर ले जाता है सुन्न में जहां मानसरोवर है। मन की सम्पूर्ण लहरें जहाँ से, अर्थात उस बिन्दु के स्थान से उठती है वहाँ सुरत चली जाती है।

मान सरोवर किये स्नान।

हंस मंडली जाय समान।।

हंस मण्डली – हंस मंडली से स्वामीजी का क्या भाव है मैं नहीं जानता। हंस एक जानवर को कहते हैं जो दूध और पानी को अलग कर देता है। जो सुरत वहां चली जाती है, जिसमें सतोगुण वाली जो अशान्ति पैदा होती थी, उसने उसको दूर कर दिया। चूंकि यह हमारे अन्तर की दशा है इसलिये इस अनुभव के आधार पर कि जो सुरतें यहां से ऊपर के लोक में जाती है जिसे विराट लोक है, त्रिकुटी है और हिरण्यगर्भ है, वहां भी ऐसे ही रूहें रहती हैं जैसे यहाँ दुनिया में बसती है। यहां भी अनेक जीव बसते हैं ऐसे ही वहां जो रूहें रहती है उनको हंस कहते हैं। वहां क्या होता है? अशान्ति को छोड़कर शान्ति ग्रहण कर लेती है। त्रिकुटी में रजोगुण को अशान्ति दूर की सुन्न में सतोगुण की अशान्ति दूर की। मैं क्रियात्मक रूप से जो मेरे साथ बीती वह बता रहा हूँ। रजोगुण में अशान्ति है वह जो चली जाती है। वह तो रावण है। वह त्रिकुटी में ध्यान करने से दूर हुई। फिर सतोगुणीवृति रखता हुआ आदमी भी अशान्त हो जाता है। उसे दूर करने को सुरत महासुन्न में जाती है ताकि रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण न रहें। वह तीनों समाप्त हो गये। कैसे? यह तीनों मुड़कर के मन का जो तालाब है जिसमें से निकल कर गये थे, उसी में समा जाते हैं। वह है हंस मंडली। तब ही तो मैं कहता हूँ कि सन्तों ने या कवियों ने वाणी ऐसी लिखी है कि उसको पढ़कर जीव खिंच गये। अपने साथ पंथों में या डेरों के साथ लोगों को लगा तो लिया मगर उनको स्वतंत्र नहीं किया। मैं कहता हूँ कि जितने महापुरुष हुये जिन्होंने पंथ चलाये, डेरे बनाये, गद्दियां बनाई, नाम दान दिये यह संत सतगुरु नहीं थे। यह गुरु मुख थे।

गुरुमुख कोटिन जीव उभारे।

इन महापुरुषों की दया से लाखों करोड़ों जीव उभरे अर्थात उनको अपने घर जाने का शौक पैदा हुआ। पंथ में आये और साधन करना आरम्भ किया। मैं इस अवस्था में संत सतगुरु हूं। मैं जीवों को स्वतंत्र करना चाहता हूं ताकि वह हमेशा के लिये भवसागर से निकल जाये। गुरुमुखों ने तो उनको उभारा और मैं कहता हूं कि पार हो जाओ। चूंकि पार होने वाले बहुत कम आदमी हैं इसलिये मेरे सत्संग में बहुत कम आदमी आते हैं। यदि मैं अपने आपको संत सतगुरु कहता हूँ तो इसका

यह अभिप्राय नहीं कि मैं किसी को फूंक मार कर लेजा सकता हूं। ऐसा कहना पाखंड जाल है या झूठा सहारा दिया गया है। यह ठीक भी है और गलत भी है। इस स्थान पर जाकर जब मनुष्य सुन्न में चला जाता है तो वह सतोगुणी अशान्ति को छोड़ जाता है।

सुन्न शिखर चढ़ी सुरत घूम।
कंगरी सारंगी डालीं धूम।।

वह किंगरी सारंगी तो सुनेगा ही क्योंकि उसके मन की सम्पूर्ण वृतियां इकट्ठी हो जायेंगी। उससे धुन अवश्य निकलेगी। उससे जो धुन या आवाज निकलेगी वह किंगरी और सारंगी के समान होगी। मैंने सुनी लेकिन अब नहीं सुन सकता। मैंने आज सुबह अभ्यास में इसको सुनने की कोशिश की क्योंकि इस अवस्था का सत्संग कराना था। बहुत जोर लगाया मगर उस धुन नहीं सका। ऊपर चला गया, क्योंकि मुझे यह ज्ञान हो चुका है कि उसका कोई अस्तित्व नहीं है।

सुन सुन सूरत हो गई सार।
पहुंची जाय त्रिवैनी पार।।

त्रिवैनी – मैं कहा करता हूं कि गंगा, यमुना और सरस्वती इन तीनों के मिलाप का नाम त्रिवैनी है। गंगा इंगला है, यमुना पिंगला है और सुषुम्ना सीधी नाड़ी है। दाईं ओर से जो विचार उठते हैं वह सतोगुणी होते हैं पवित्रता के होते हैं। बाईं ओर के बुराई के विचार होते हैं सुषुम्ना के केवल आध्यात्मिक भावों के होते हैं।

महासुन्न में पहुंचने पर न सतोगुण रहता है न रजोगुण न तमो गुण। तीनों प्रकार के विचार समाप्त हो जाते हैं। वह त्रिवैनी से पार हो जाता है और वह सब मानसरोवर में लय हो जाते हैं। उसको कहते हैं कि त्रिवैनी से पार जाना।

अब समझ गये होंगे कि त्रिवैनी के पार जाने का क्या अर्थ है। इंगला पिंगला और सुषुम्ना इन तीनों से तीन प्रकार के विचारों की धारें निकलती हैं जैसे थूक मुँह से आता हैं, पेशाब इन्द्री से आता है। शुद्ध रक्त आने की खास खास नाड़ियाँ हैं और बुरे रक्त के आने की भी खास नाड़ियां हैं, इसी प्रकार अच्छे विचार

इंगला से जाते हैं, बुरे विचार पिंगला में जाते हैं और शान्ति के विचार सुषुम्ना से जाते हैं। जब मनुष्य महासुन्न में जाता है तो यह तीनों नाड़ियां समाप्त हो जाती हैं अर्थात न अच्छे विचार रहते हैं न बुरें और न आध्यात्मक विचार रहते हैं। यह तीनों समाप्त ही जाते हैं।

महासुन्न का नाका लीन।

गुप्त भेद जाय लीना चीन।।

फिर महासुन्न आ जाता है अर्थात भँवर गुफा। यहां सविकल्प समाधि से मन की निर्विकल्प समाधि लगती है। अब मैं न सविकल्प समाधि लगा सकता हूँ न निर्विकल्प समाधि। मेरी सहज समाधि जब लगेगी आत्मा की लगेगी। क्यों? क्योंकि मुझे सत्संगियों के अनुभव से सतगुरु मिल गया है, सच्चा ज्ञान मिल गया है कि मेरे अन्तर जितने अच्छे या बुरे या रजोगुणी, सतोगुणी और तमोगुणी विचार थे यह कुछ नहीं थे किन्तु माया थे। यह थे नहीं मगर भासते थे। इस ज्ञान ने मुझको सविकल्प और निर्विकल्प दोनों से पार कर दिया। अपने जीवन का अनुभव कह रहा हूं। कोई किसी बात का दावा नहीं। जितना जिस महापुरुष ने जाना वह कह गया। जितना मैंने पाया वह मैं कहता हूं।

आज सुबह कोशिश करने पर भी मैं निर्विकल्प समाधि न लगा सका क्योंकि मुझे यह ज्ञान हो चुका है कि यह मन है नहीं मगर भासता है। यह ज्ञान मुझको चौथे पद में ले गया मगर जिनको अभी तक यह ज्ञान नहीं है और वह मन के रूप रंगों को सच मानते हैं। उनको यह साधन करना लाजिमी है। मैंने तो निर्विकल्प समाधि में जाकर बहुत देख लिया है।

अंध घोर जहां भारी फेर।

सत्तर पालंग जा का घेर।

स्वामीजी ने सत्तर पालंग कैसे कह दिया यह तो वही जानते होंगे। मैं तो इतना जानता हूँ कि जब निर्विकल्प समाधि लग जाती है तो मन क्रिया नहीं करता, काम नहीं करता। मन के अन्तर जो मन, चित्त बुद्धि और अहंकार है यह चारों अपना काम छोड़ देते हैं। यह जो रजोगुण, सतोगुण और तमोगुण हैं यह तो मन बुद्धि चित और अहंकार के खेल से ही पैदा होते हैं। जब यह खत्म हो जाते हैं तो

खुद मस्ती (आत्मानन्द) आ जाता है। मैं इसमें बहुत समय तक रहा हूँ। सुनाम स्टेशन पर मेरे पास दाता दयाल आये। मैं उस समय आत्मानन्द (खुद मस्ती) में था। यह क्यों आता है? क्योंकि में दातादयाल के रूप के साथ घनिष्ट प्रेम करता था। मैं उनको संत मानता था। किसी आदमी को अभ्यास मिला हुआ है और वह साधक है वह इस महासुन्न में विलीन हो जाता है। जब मन, चित, बुद्धि, अहंकार इकट्ठे हो जाते हैं इनके अन्तर से एक विशेष प्रकार की एनरजी पैदा होती है वह आनन्द देती है। वह आनन्द या भक्ति की दशा में झूमता है और यह राग रागनियां उठती हैं।

झनकारें अदभुत क्या बरनूं।

सुन सुन धुन मन में अति हरषूं।

मन में लय हो जाने के कारण जब उसकी चेतनता गहरी अवस्था की होती है उसको आनन्द मिलता है। यह मेरा अनुभव है क्योंकि यदि मुझे आनन्द न मिलता तो मैं उस मस्ती में क्यों फिरता जैसे सुनाम में फिरता था। जब मैं धाम में आरती करने ताज लेकर गया तो मैं मस्ती में क्यों फिरता। यह अवस्था कब आती है और क्यों आती है? यह उस समय आती है जो मानसिक ध्यान में गुरु के रूप के प्रेम में लगे रहते हैं।

पाँच अंड रचना तहँ कीनी।

ब्रह्मा पाँच ता में हुये लीनी।।

स्वामीजी के पांच अंड और पांच ब्रह्मण्ड का मुझे पता नहीं। मैं समझता हूँ कि हमारी जो पांच इन्द्रियां है यह वहां इकट्ठी हो जाती हैं। जब पांच ज्ञानेन्द्रियों के इकट्ठे होने का जो रचना का खेल है उसका यह वर्णन है। अंड कहते हैं मन को! मन के साथ पांच ज्ञानेन्द्रियाँ होती हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियों का जो कार्य है वही मन है। ब्रह्म और मन बढ़ता है और सोचता है। यह है पांच ज्ञानेन्द्रियों के इकट्ठा होने की अवस्था का नाम। यह मेरी समझ में आया है। मैं अपने क्रियात्मक जीवन का अनुभव बता रहा हूं। मैं शब्दों की व्याख्या नहीं करता।

अंडन शोभा बरनू कैसे।

सब्ज सेत कोई पीत वरन से।।

अंड – ज्ञानेन्द्रियों के अलग अलग कार्य होते हैं। जो वस्तु गति करती है उसमें से रंग निकलते हैं। कहते है कि हर वस्तु का भिन्न भिन्न रंग होता है। मैं जब साधन किया करता था तो मैंने कम से कम १०० पृष्ठ की डायरी लिख कर दाता दयाल को भेजी थी। १२घंटे अभ्यास करके मैंने लिखा था कि मेरी समझ में यह आया है और आपकी वाणी में यह आया है। उन्होंने मुझे २५ पृष्ठ अंग्रेजी में लिखकर भेजे। मुझे याद नहीं कि उन्होंने क्या उत्तर दिया था और न यह याद कि मैंने क्या लिखा था। अब तो मैं सहसदल कँवल, त्रिकुटी, सुन्न महासुन्न, भँवर गुफा सबको भूल रहा हूं। सतलोक को भी भूल रहा हूँ। मगर यह है ठीक जो स्वामीजी ने लिखा है। उनकी वर्णन शैली और है और मेरी और है।

लख लख अरब तास परमाना।

यह अंड अति तुच्छ दिखाना।।

यह जो हमारे मन का अंडा है जिसको हम देखते है इसी तरह ऊपर भी महासुन्न का देश है। तुम स्वयं हिसाब लगा लो। पृथ्वी से जल कितना बड़ा है। जल से अग्नि से, वायु और वायु से आकाश कितना बड़ा है ! यह तो विराट पुरुष की रचना की दशा है। अब कासमिक किरणें जो मन की आशायें हैं यह बहुत ही अधिक है। स्वामीजी ने लख लख अरब कैसे कहा यह तो उनको पता होगा मगर अनुमान से मेरी बुद्धि मानती है कि ऊपर का महासुन्न का जो लोक है उसका कितना बड़ा विस्तार होगा, जब कि हमारे मन के विस्तार का पता नही है। हमारी आशायें कितनी लम्बी चौड़ी है। वह महासुन्न दसवां द्वार जो हैं वह कितना लम्बा चौड़ा होगा।

या में ब्रह्म व्यापक होई।

ताकी गति कहो कितनी होई।।

वह कहते हैं कि जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्यापक है, जो इन सब को गति देता है उसकी गति कितने होगी। तुम्हारे अन्तर जो तुम्हारा मन है उसमें तुम कितनी रचना करते हो, कितनी विचार उठाते हो ! कितनी विद्यायें तुम्हारे मन से निकलती

हैं ! वेद मन से निकले। कुल साइंस मन से निकली। कुल शास्त्र मन से निकले। सारा ज्ञान मन से निकला। तुम्हारे मन के अन्तर से इतना ज्ञान निकला तुम अपनी बावत सोचो। इससे अनुमान लगाओ कि तुम्हारे मन के अन्तर जो ब्रह्म है वह कितनी बड़ी रचना करता है। वह जो ऊपर का बड़ा ब्रह्म है जिसके हम अंश है वह कितनी रचना करता होगा ! उसकी गति को कौन जान सकता है।

ताका ज्ञान पाय यह ज्ञानी।

फूले मन में हुए अभिमानी।।

मनुष्य इस अवस्था को पाकर यह समझता है कि मैं ब्रह्म हूं। उस अवस्था में जब जीव आता है तो कहता कि मेरे सिवाय कोई नहीं। मैं ही ब्रह्म हूं। स्वामी जी कहते हैं कि यह सब अभिमानी हैं।

वह मालिक हमारा आदि है। उसके सम्बन्ध में आगे चलकर वर्णन करूँगा। यह तो केवल तुम्हारे मन का खेल है। जो आत्मा का खेल है उसकी तो बात ही निराली है। इस मन के खेल में आकर मनुष्य में बड़ा भारी अभिमान आ जाता है। उसमें क्रोध आजाता है और कह देते हैं कि मैं तेरा सर्वस्व नष्ट कर दूँगा। तुम्हारा खून पी जाऊँगा ! यद्यपि उसमें यह शक्ति है या नहीं कि वह किसी का खून पी सकता है या किसी का सर्वस्व नष्ट कर सकता है मगर वह अपने मन के अभिमान में आकर क्या–क्या करता है। ऐसे ही यह मन कहता है कि मैंने सब कुछ पा लिया है। दुनियां में मैं ही सब कुछ हूँ और कुछ नहीं। इसलिये स्वामीजी कहते हैं कि जिस तरह तालाब में रहता हुआ मेंढक तालाब को ही समुद्र समझता है ऐसे ही इन ब्रह्म कहने वालों की दशा है। वह मालिक तो अपरम्पार है। उसकी गति को जानना कुछ और चीज है।

क्या करें यह हैं लाचार।

वह तो देश न देखा सार।।

यह मन के चक्कर से बाहर नहीं गये। जो आत्मा का देश है जो प्रकाश और शब्द का देश है जो सतलोक है, उसको तो उन्होंने देखा ही नहीं। वह लाचार हैं। उसको दिखाने वाला सतगुरु है। सतगुरु दसवें द्वार से आगे मिलता है। गुरु

त्रिकुटी में है। दसवें द्वार से आगे सतगुरु मिलता है वह शब्द स्वरूपी गुरु है और बाहर में वह शब्द और प्रकाश का भण्डार है सतलोक है। मैं इस रास्ते पर जा नहीं सकता था क्योंकि मैं तो दातादयाल के रूप में फँसा हुआ था मगर मैं चाहता अवश्य था कि मैं अपने घर जाऊँ। इसका पता नहीं लगता था। दातादयाल ने इस तरह समझाया नहीं जिस तरह मैं समझता हूं। परिणाम यह निकला कि बात मेरी समझ में नहीं आई। मुझे समझ देने के लिये मुझे दातादयाल ने गुरु बनाया। जब सत्संगियों ने कहा कि मेरा रुप उनके अन्तर प्रगट होता है और मैं नहीं होता तो मुझे पता लगा कि मन में बड़ी भारी शक्ति है। तुम बाबा फकीर को बना लेते हो, पर्चे हल करा लेते हो, नदी में डूबने से बच जाते हो आदि आदि। तो वह कौन है। वह तुम्हारा मन है। तुम्हारे मन में कितनी भारी गति है। इसलिये मुझको वह जो समुद्र है मालिक का, उसकी खोज हुई। अब मैं उस खोज में चलता रहता हूँ।

बिन देखे कैसी परतीत।
उन नहिं जानी अचरज रीत।।

मैं यह अगला देश देख नहीं सकता था। मैं तो उस मेंढक की तरह यह समझता था कि मुझसे सिद्धि शक्ति आ गई। यही सब कुछ है। असली घर भूला हुआ था मगर अब देख लिया।

इसी ब्रह्म को जान अपार।
भूले मारग करें विचार।।

शास्त्रों ने तो ब्रह्म के तीन रूप बताये हैं मगर कबीर साहब ने ब्रह्म के बहुत रूप बताये हैं। सबल ब्रह्म जो सहसदल कँवल में रहता है विराट पुरुष। एक शुद्ध ब्रह्म जो महासुन्न में रहता है उसके आगे आता है पार ब्रह्म जो सोहंग पुरुष में रहता है। इसके आगे आता है शब्द ब्रह्म जिसको नाम कहते हैं। दुनियां पांच नाम को नाम समझती है। मुंह से राधास्वामी राधास्वामी कहते रहते हैं कि नाम मिल गया।

नाम रहे चौथे पद माँही।
यह ढूँढे त्रिलोकी माही।।

दातादयाल कहा करते थे कि फकीर! राधास्वामी मत को समझने वाली दुनिया अभी पैदा नहीं हुई। शायद तुम जीवन में समझ जाओ। वह शायद का शब्द कहा करते थे। इस राधास्वामी मत के समझने की यह गुरु पदवी मुझे मिली थी।

अब इनको कैसे समझाऊँ।
वह नहिं मानें चुप रहाऊँ।।

अब जो कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसे सुनने को कोई तैयार नहीं मैं यों ही बात कह देता हूं। कौन समझेगा मेरी बात को? किसी को इस रहस्य के जानने की आवश्यकता नहीं। क्या तुम लोग इस रहस्य के जानने के लिये मेरे पास आये हो? नहीं, अब चुप रहने में भलाई है मगर मेरा कर्म है, मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा।

राधास्वामी कही सुनाय।
तीनों परदे दिये लखाय।।

इन तीनों दर्जों या स्थानों का वर्णन सबल ब्रह्म व शुद्धब्रह्म का वर्णन है। सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण या ओंकार का वर्णन है इससे आगे बिन्दु का स्थान है। वह बिन्दु वास्तव में तुम्हारा मन है उससे सारी रचना होती है। ऊपर एक लोक

है जिसमें से इलैक्ट्रोन्स और प्रोटोन्स निकलते हैं और कुल रचना होती है। वह जो असली देश है आत्मिक देश वह इस बिन्दु से तथा महासुन्न से आगे है। उसका वर्णन आगे आयेगा।

शब्द स्थान चौथा

अब चौथे को करी तयारी। चलरी सुरत तू शब्द सम्हारी।।
नाल हंसिनी घाटा फांदा। रुकमिन नाल सुरत को साधा।।
पांजी निरखी जहं गम्भीर। सुरत निरत दोऊ धारी धीर।।
दायें रचे दीप परचंड। बायें रचाये बहुतक खंड।।
मोती महल और रतन अटारी। हीरे लाल जड़े जहँ भारी।।
गुप्त भेद यह दिया जनाई। जानेंगे कोई सन्त सिपाही।।
भँवर गुफा का परबत निरखा। सोहं शब्द जाय जहं परखा।
धुन मुरली जहँ उठत करारी। सेत सूर सूरत निरखारी।।
तेज पुँज वह देश भलारी। धुन अपार तहँ होत सदारी।।
हंस अखाड़ा लीला चौक। भक्त मंडली खेलें थोक।।
लोक अनन्त भक्त जहँ बसें। नाम अधार अमी रस रसें।
राधास्वामी यह भी गाई। चौथा परदा लीन्हा जाई।।

इस बात को पढ़कर मैं पागल हो गया था। अभ्यास करते करते मेरी सारी आयु बीत गई। दाता दयाल कहा करते थे– वाणी जालम् महा जालम्। तीन स्थानों का वर्णन मैंने पहिले कर दिया है। अब यह चौथे स्थान का वर्णन है। इसमें एक कड़ी है–

गुप्त भेद यह दिया जनाई।
जानेंगे कोई संत सिपाही।।

जब तक किसी को यह गुप्त भेद नहीं मिलता कोई संत सिपाही नहीं हो सकता। अब इन वाणियों को पढ़कर कौन गुप्त भेद को समझेगा। सत्संगी तो अभ्यास करते–करते मर जायेंगे उनको गुप्त भेद कहां से मिलेगा! वह गुप्त भेद

क्या है? स्वामीजी का गुप्त भेद क्या है वह तो वह जानते होंगें। दूसरे सन्तों का गुप्त भेद वह दूसरे सन्त जानते होंगे। मैं नहीं जानता। जो गुप्त भेद मुझको तुम लोगों में मिला है। जब मेरा रूप आप लोगों के अन्तर में प्रगट होता है। मुझे पता तक नहीं होता है तो मुझे यह निश्चय हो गया कि मेरे अन्तर में जितने रूप रंग, देवी देवता आते थे वह थे नही मगर भासते थे। जब मैं तुम्हारे अन्तर जाता नहीं वह तुम्हारा अपना ही मन जो है वह माया है। यह सारा खेल करता रहता है। यह भेद मैं दुनियां को देना चाहता हूं जिसको आज तक सब लोगों ने गुप्त रखा है। तुम लोग राम के पीछे कृष्ण के या गुरु के पीछे इसलिये लग रहे हो कि गुरु आकर के तुम्हारे जाग्रत में या अभ्यास में सहायता करता है। इसी एक ख्याल से सम्प्रदाय बन गये, पंथ बन गये, गद्दियाँ बन गई। गुरु गोविन्दसिंह जी के बारे में लिखा हुआ है कि उनका एक शिष्य जोगासिंह नामी होशियारपुर में एक कंजरी के मकान में जाने लगा तो आगे गुरु गोविन्दसिंह खड़े थे। वह बच गया। ऐसी बातें मुसलमानों में भी है। किसी पीर ने किसी को दर्शन दिये। किसी की डूबती हुई बेड़ी को बचा दिया। अब मैं आपके सामने बैठा हुआ हूं। एक ठेकेदार की चिठ्ठी आई। नाम भूल गया हूँ। उसकी स्त्री मुझको मानती थी। वह लिखता है कि वह ठेकेदारी के लिये एक अमीर विधवा से रुपया लिया करता था। वह स्त्री उसको अपने जाल में फँसाना चाहती थी। उस स्त्री ने उसको आने को लिखा। उसकी स्त्री को यह मालूम था कि उस अमीर विधवा स्त्री की नीयत कैसी है। तो जब वह वहां जाने के लिये चलने लगा तो उस स्त्री ने कहा जाओ। दाता दयाल तुम्हारी रक्षा करेंगें। वह ठेकेदार वहां जाने के लिये मजबूर था क्योंकि उससे रुपया लिया करता था। वह उसके मकान पर गया। यह खत मास्टर मोहनलाल ने पढ़ा था। जब वह एक ही कमरे में सोये हुए थे तो स्त्री उसको बुलाती थी। वह आदमी उठ कर उसके पास जाता था लेकिन वापिस आ जाता था। कहता है कि आगे बाबा फकीर खड़े हैं। वह लिखता है कि उसने रात को उठ कर चार बार उस स्त्री के पास जाने की कोशिश की और चारों ही बार बाबा फकीर आगे खड़े थे। वह वापिस आ गया तो अपनी स्त्री को कहने लगा तुम्हारा बाबा तो वहां भी मेरा पीछा नहीं छोड़ता है। मैं आपको सच कहता हूं कि न मैं वहां गया और न इस बात को जानता हूँ। यह सच्ची घटना है। ऐसे ही जितने पीर फकीर

हुए हैं वह भी शायद नहीं गये। मुसलमानों, हिन्दुओं और भी सब सम्प्रदायों में ऐसी ऐसी कहावतें हैं। इससे मुझे यह भेद मिला कि जाने और आने वाला केवल मनुष्य का अपना ही मन है और यही माया है। सारा संसार माया में ग्रस्त है। जब तक किसी को यह गुप्त भेद नहीं मिलता और उसकी सूरत इस प्रकार के दर्शनों और मन के रूपों में से निकलती नहीं है वह चाहे सिर पटक के मर जाये वह चौथे देश में या सोहं पुरुष में जा ही नहीं सकता। यह गुप्त भेद है। मानवता मन्दिर वालों मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि इस जगह लोग चार पैसे देते हैं। मैं उनका दरवाजा बन्द कर रहा हूँ। दुनिया ऐसे ही तो गुरुओं को देती है। जब तक किसी को यह गुप्त भेद नहीं मिलता कि जितने रूप रंग है यह सब माया है, मन का खेल है वह अपने आत्म पद में नहीं जा सकता। आत्मा प्रकाश स्वरूप हैं। आत्मा में वहां आत्मिक आनन्द है, विज्ञान आनन्द है। यह सब माया देश के आनन्द है। तो जब तक किसी को यह विश्वास नहीं होता कि यह सब मन का ही चक्र है तो जब तक वह अभ्यास करेगा उसकी सूरत को यह मन खेंचता ही रहेगा। यह रूप रंग घर बार या संसार का व्यवहार यह सब मन का चक्र है। जब से मुझे यह ज्ञान हुआ मैं उस आत्म पद पर पहुँचने के लिये मजबूर हुआ क्योंकि मुझे अपने घर जाने की लालसा थी। मेरा घर शास्त्रों के अनुसार माया देश से परे पारब्रह्म में है या मैं स्वयं आत्मा हूं। अपने आत्मरूप में तो तुम तब ठहर सकते हो जब तुमको यह भेद मिल जाये। यदि तुमको यह भेद मिल भी जाये फिर भी जब तक तुमको इच्छा नहीं और तुम्हारी संसार की इच्छायें समाप्त नहीं हुई, तब तक तुम वहां नहीं जा सकते। मैंने तुमको भेद दे दिया, ज्ञान दे दिया मगर कोई कोई सन्त होता है जो ज्ञानी बनता है और जिसको अपने घर जाने की इच्छा होती है। मैंने इस भेद को क्यों खोला? क्योंकि मैंने यह देखा कि जिन–जिन महापुरुषों, पीर, पैगम्बर और साधुओं ने जिनके रूप लोगों के अन्तर जाकर उनकी इस तरह सहायता करते रहे, उन्होंने इसके बदले में मान लिया, धन लिया, गद्दियां और डेरे बनाये। उनके जीवन के परिणाम मैंने अच्छे नहीं देखे। मैं उनका नाम लेना नहीं चाहता क्योंकि उनके प्रेमियों को बुरा लगेगा। अपने – अपने महापुरुषों के जीवनों का अध्ययन करके देखो तो तुमको स्वयं पता लग जायेगा कि मैं ठीक कहता हूँ या गलत।

आज चौथे स्थान का वर्णन है। जब तक किसी को गुप्त भेद नहीं मिलता वह लाख कोशिश करे अपने आत्म स्वरूप और प्रकाश स्वरूप में नहीं रह सकता अथवा ठहर नहीं सकता। यदि उसको यह भेद मिल भी गया तो जब तक उसके मन और सुरत में अपने घर जाने की पूरी लगन न हो और दृढ़ता न हो उसको यह मन रोकता रहेगा। मैंने जीवन भर अभ्यास किया है। अब भी करता हूं। जब मन के सारे रूप छूट जाते हैं तो फिर प्रकाश बढ़ेगा, जिसका इस चौथे स्थान में वर्णन है।

अब चौथे की करी तयारी।

चलरी सुरत तू शब्द सम्हारी।।

सभल कर क्यों चलना चाहिये? तुम सम्भल कर तब ही चलोगे जब तुमको घर जाने की इच्छा होगी नहीं तो तुम्हारा मन तुमको खींच लेगा। बाहर का गुरु ज्ञान देता है ताकि तुम्हारा मन तुमको खींच न सके। दसवें द्वार से निकलने वाला बाहर का कोई पूर्ण गुरु होता है जो तुमको असली और सच्चे सतगुरु का पता देता है। वह सच्चा सतगुरु कौन है? बाहर के गुरु की दया से वह सच्चा सतगुरु तुम्हारी अपनी ही आत्मा है। वहां प्रकाश है। जब वह अवस्था आ जाती है तो वहां जाकर आत्मा प्रकाश को देखती है जो उसका अपना ही रूप है। उसके अपने ही रूप के अन्तर जो आत्मा की गति है उसका नाम शब्द है। वह वहां पहुँच कर साधन कर सकता है। आत्मा दो शब्द से बना है–अत और मनन, जो गति करता है और मनन करता है। आत्मा संस्कृत का शब्द है। बाहर के गुरु का इसे समझा देना कर्तव्य है। पहिले तो यह कर्तव्य था कि जीव को उसकी प्रकृति के अनुसार चलाता था सत्संग कराता था कि किसी तरह बात उसकी समझ में आ जाये। उसका मन बड़ा चंचल था ठहरता नहीं था। उससे उसने सुमिरन ध्यान करवाया। सहसदल कंवल से उसको गुजारा। त्रिकुटी से गुजारा। जब उसके मन की समाधि लग गई मन शान्त हो गया। रजोगुण, तमोगुण गया। फिर सतोगुण जो डाकू था उसको भी दसवें द्वार में जाकर छोड़ दिया। फिर आगे आत्मपद की बारी आई।

नाल हंसिनी घाटा फांदा।

रुकमिन नाल सुरत कौ साधा।।

मुझे पता नहीं स्वामीजी का नाल हंसिनी और नाल रुकमिनी से क्या भाव

है। जो कुछ मैं समझता हूँ वह कहता हूँ। हंसिनी कहते है हंस की मादा को। हंसिनी में पहिचान की शक्ति होती है। वह दूध व पानी को छान लेती है। वह जो आत्मा के अन्तर दूध और पानी को छान लेने वाली अवस्था थी उसको छानकर वह जो घाटी थी रास्ते में उसको फाँद गई। अभिप्राय यह कि इस तमीजी शक्ति या विवेक शक्ति को छोड़ दिया। वह जो उसमें सत और असत के निर्णय करने का अन्तर में भाव था वह उसने छोड़ दिया। मैं 'घाटा फांदा' का यह अभिप्राय समझता हूं। फांदा का अर्थ है छलांग मार कर पार हो जाना। वह जो विवेक या तमीजी शक्ति आत्मा के अन्तर थी वह मन के रूपों को सत मानता था उसके विषय में उसके विचार रहते थे, वह उसको फांद गया। मैं इसका यह अर्थ समझता हूँ।

नाल हंसिनी घाटा फाँदा।

रुकमिन नाल सुरत को साधा।।

मैं इसी कारण से कहता हूँ कि इस वाणी जाल से लोग अन्तर में अभ्यास करते करते पागल हो गये। कई सत्संगी पागल हो चुके हैं। रुकमिनी का क्या अर्थ है? मैं यह समझता हूँ कि इसका अर्थ स्त्री है। आत्मा ने अपनी शक्ति को साथ लिया। कृष्ण को मन कहा गया है। रुकमिनी कृष्ण की ब्याहता पत्नी थी। स्त्री मनुष्य की शक्ति होती है, तो आत्मा ने अपनी शक्ति को साथ ले लिया। शक्ति को साथ लेने से क्या होगा? वह शक्ति को साथ लिये हुए जब चौथे स्थान पर साधन करता है तो वह शक्ति उसको फिर मन के नीचे आने नहीं देती। उसकी वह रुकमिनी शक्ति उसको गिरने नहीं देती।

पाँजी निरखी जहाँ गम्भीर।

सुरत निरत दोऊ धारी धीर।।

आत्मा उस शक्ति को साथ लेकर गंभीर हो जाता है और अपने आप में इकट्ठा होकर ठहर जाता है और अपने आपको वश में कर लेता है। वह अपनी शक्ति को अर्थात रुकमिनी को साथ लेकर नृत्य करता है। नृत्य नाचने को कहते हैं। आत्मा अपने ही प्रकाश स्वरूप में नाचता है। उसको कहते हैं आत्मा + आनन्द। आदमी जब नाचता है तो आनन्द लेता है। कई नाचने वालों को आपने देखा होगा

कि वह नाचकर आनन्द लेते हैं और उसको देखकर दूसरे भी आनन्द लेते हैं। वह आत्मा रुकमिनी को साथ लेकर जो तमीज या विवेक की शक्ति थी यह क्या है? मन क्या है? बुद्धि क्या है? इन विचारों को छोड़ जाता है अर्थात फांद जाता है हंसिनी पद को। मैं ऐसा समझता हूं। यह दावा नहीं करता कि जो कुछ मैं कहता हूँ वही ठीक है।

दायें रचे दीप परचंड।

बायें रचाये बहुतक खंड।।

उन्होंने यह कैसे कहा मुझे पता नहीं। मैं यह समझता हूँ कि हमारी आत्मा के अन्तर जो प्रकाश हैं यह हमारा आत्म स्वरूप है। ऐसे ही इसके ऊपर एक पारब्रह्म का देश है जिसको परमात्मा कहते हैं। यह बड़ा भारी लोक है। उसमें अनेक प्रकार के प्रकाशों के लोक है। उनमें प्रकाश के अणु रहते हैं। वहां वही पहुँच सकता है जो उस मालिक का भक्त होता है, जो मालिक को मिलना चाहता है। जितनी आत्मायें यहां से उस मालिक की भक्ति करने के विचार में रहती हुई जाती है और उनके प्राण इस आत्म पद में रहते हुए छूटते हैं तो अनेकों आत्मायें उस देश में जाकर रहती हैं। जैसे भूत, प्रेत, वैताल या बाबा सेढू जैसी आत्मायें रहती हैं, जो उस मालिक की भक्ति करने या मिलने के विचार लेकर गई, वहां जाकर ठहर गई।

मोती महल और रतन अटारी।

हीरे लाल जड़े जहां भारी।।

यह वहां का आनन्द इन शब्दों में वर्णन किया गया है। जब किसी सुन्दर वस्तु का वर्णन करना होता है तो ऐसे शब्द प्रयोग करके उस भावना को या उस शोभा को प्रगट किया जाता है, जिस तरह साधारण रूप से जब कोई स्त्री सुन्दर होती है तो लोग कह देते हें कि आंखें हिरनी जैसी हैं, कमर चीते जैसी और चाल मोर जैसी है। न वह मोर है, न चीता मगर उस अवस्था को प्रगट करने के लिये इस माया देश में शब्द बनाये गये हैं।

गुप्त भेद यह दिया जनाई।

जानेंगे कोई सन्त सिपाही।।

मुझे पता नहीं कि स्वामीजी का क्या गुप्तभेद था। जो गुप्त भेद मुझको मिला वह मैंने प्रगट कर दिया। किसी सन्त ने आज तक इस भेद को नहीं खोला। यदि किसी के सामने खोला भी तो उसके मुँह को बन्द कर दिया। जैसे कबीर साहब ने कहा–

धर्मदास तोहि लाख दुहाई।

सार भेद बाहर नहि जाई।।

स्वामी जी ने भी कहा–

सत बिना कोई भेद न जानें, वह तोहि कहें अलग में।

इस भेद को गुप्त रखना जीव के हित के लिये आवश्यक था। यह न समझना कि उन महापुरुषों का विरोध कर रहा हूँ कि उन्होंने यह गुप्त भेद क्यों नहीं खोला। यह लाजिमी था। एक लड़का है जवानी में आया। अब गुप्त भेद तो यही है कि शादी करवा लोगे, बाल बच्चे होंगे। तुमको कष्ट होगा। फिर बाद में मर जाओगे। यदि तुम उसको यह कह दो कि व्यर्थ शादी क्यों करते हो, क्यों मुसीबत मोल लेते हो तो क्या कोई मानेगा? इसलिये शायद सन्तों ने यह भेद नहीं खोला। मैंने क्यों खोला? मेरे जिम्मे ड्यूटी है–

तेरा रूप है अद्‌भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।

जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल सनेही।।

इस परमार्थिक गुप्त भेद के न कहने से परिणाम यह निकला कि मानव जाति बँट गई। कोई किसी सन्त महात्मा का चेला हो गया यह समझ कर कि वह सन्त उसकी सहायता करता है। कोई मुसलमान हो गया। उसने समझा कि ग्यारहवीं का पीर आकर उसकी सहायता करता है। किसी ने यह समझा कि हजरतअली सहायता करते हैं। किसी ने समझा कि गुरु गोबिन्दसिंह या गुरु नानक सहायता करते हैं। किसी ने समझा कि राम या कृष्ण सहायता करते हैं आदि। इससे भारत में अनेक धर्म बन गये। इसका परिणाम आज हम भोग रहे हैं। हिन्दु मुसलमान आपस में लड़ रहे हैं। साम्प्रदायिक झगड़े हो रहे हैं। इसलिये मैंने इस भेद या रहस्य को प्रगट किया।

एक नौजवान ने बात को नहीं समझा। भावुक हो गया। स्त्रियों के पीछे फिरता रहा। काम के वेग में आकर विषय विकार में अधिक फँसा। शरीर दुर्बल हो गया। भ्रम हो गया उसने इस भेद को नहीं समझा। अपना जीवन इस तरह नष्ट कर लिया। यह है गुप्त भेद।

तुम कहोगे मैं ऊँचा रहता हूँ। क्या मैं इस मन में नहीं खेलता या मन में नहीं आता? आता हूँ। मुझे भेद मालूम है। जीवन में मुझे भी हर एक वस्तु की आवश्यकता है। इस माया देश में रहता हुआ आप लोगों से उतना ही सम्बन्ध रखता हूँ जिससे मेरा गुजारा चलता रहे क्योंकि इसके बिना काम नहीं चलता। यही कारण है कि जब कोई आदमी मुझ पर हावी होना चाहता है और मैं समझता हूं कि इससे मुझको अशान्ति आयेगी मैं घबरा जाता हूँ और भागना चाहता हूँ। मैं ही नहीं ऐसी दशा में तुम भी भागना चाहते हो। क्या कोई भाग सकता है? नहीं, मगर तुम अशान्ति से बचना अवश्य चाहते हो। यह दूसरी बात है कि तुम बच सको या न बच सको। यह है गुप्त भेद। जब तक हम इस माया देश में है तब तक हमारा गुजारा सांसारिक कर्मों के बिना नहीं चलता मगर उतना सम्बन्ध रखो जिससे कि तुमको अशान्त न होना पड़े। कानों में वह सोना डालो जो कानों को कष्ट न दे। अपने मित्रों और रिश्तेदारों के साथ ऐसे सम्बन्ध रखो जो तुम्हारे लिये दुखदाई न हों। यह है क्रियात्मक रूप (अमली पहलू) का पाठ।

भँवर गुफा का परबत निरखा।

सोहंग शब्द जाय जहां परखा।।

वह तुम्हारे आत्मा का प्रकाश रूप है। प्रकाशरूपी आत्मा तुम हो मगर आत्मा आत्मा कहने से तुम आत्मा नहीं बन सकते। आत्म पद में तो तुम तब जाओगे जब मन के सम्पूर्ण विचारों को छोड़कर तुम्हारा जो आत्म पद है रुकमिनी अर्थात् आत्मा की सत्ता को लेकर वहाँ ठहरोगे। तब तुमको आनन्द मिलेगा। इसका नाम है भंवर गुफा। यह नाम क्यों रखा है? यह तो वह जानते होगे भंवर उसे कहते हैं जो नदी या जल में जल का एक चक्र बन जाता है। लहरें आकर के उसमें चक्कर खाती है। उसमें यदि नाव भी आ जाये तो वह भी चक्कर खाने लगती है। हमारी जो आत्मा है यह प्रकाशरूप में चला जाती है क्योंकि वह हंसिनी को फाँद

चुकी होती है और उसको ज्ञान हो चुकी होती है। वह वहाँ आत्म पद में ठहर जाती है। आत्मा ही बार बार जन्म लेती है। उस आत्म पद से फिर फुरनायें उठती रहती हैं चूंकि उसने वह घाटा फांदा हुआ होता है इसलिये वह नीचे नहीं गिरता। शरीर की प्रकृति में वह नहीं जाता। मुड़कर फिर वहीं जाता है और अपने ही स्वरूप में ठहरने की कोशिश करता है। इसलिये शायद इसका नाम भँवर गुफा रखा हुआ है। हर एक रिसर्च करने वाले ने जो कुछ रिसर्च की, उसके उसने अलग अलग नाम रखे, जिस तरह वैज्ञानिकों ने जो वृक्षों के बीज में, पशुओं के बीज में या मनुष्य के बीज में उपजाऊ शक्ति होती है उसका नाम उन्होंने जीन रखा है। अमरीका में डा० गोविन्दराम खुराना आदमी की जीन में परिवर्तन करके अच्छी मानव नसल पैदा करने का परीक्षण कर रहा है। उसने उस उपजाऊ शक्ति का नाम जीन रखा है। हमारी आत्मा जब अपने रूप में रहती है, उस आत्मा से सृष्टि रची जाती है। तब वह नीचे आता है क्योंकि उसको आत्म स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। जब उसकी वृत्ति नीचे आती है मगर फिर वह वापिस ऊपर को अपने स्वरूप में चला जाता है। इस अवस्था का नाम शायद सन्तों ने भँवर गुफा रखा है। आत्मा अपने स्वरूप में जाकर नीचे नहीं आने देती। यदि आने लगे तो फिर घेर कर वापिस ले जाती है यह है सन्तों की चौथी श्रेणी। जो मैंने समझा है वह कहता हूं। सम्भव है मेरा अनुभव गलत अनुभव गलत हो। कोई दावा नहीं।

धुन मुरली जहाँ उठत करारी।

सेत सूर सूरत निरखारी।।

यह स्वेत (सफेद) रंग का प्रकाश होता है। तुम्हारा आत्मस्वरूप सफेद है। जब यह तुम्हारी आत्मा नीचे आती है वो उसके ऊपर मल चढ़ जाते हैं और दूसरे विचार आ जाते हैं, तो निचली श्रेणियों में आकर इस आत्मा का रंग बदल जाता है। कैसे बदलता है? जैसे सूर्य सफेद है मगर सुबह जब सूरज चढ़ता है तो लाल रंग का मालूम होता है। शाम के समय उसकी रंगत और होती है। इस तरह मनुष्य की आत्मा तो प्रकाश स्वरूप है और सफेद रंग की है मगर जब उसके ऊपर मन के विचार और प्रकृति की भावनायें चढ़ जाती हैं तो जिस जिस श्रेणी पर वह आती है उसके अनुसार उसके रंग दिखाई देते हैं। जैसे सहसदल कँवल में पचरंगी

फुलवारी, त्रिकुटी में नील वर्ण और पीत वर्ण मगर आत्मा का रंग सफेद है।

तेज पुंज वह देश भलारी।

धुन अपार तहां होत सदारी।।

तेज पुंज – तेज कहते हैं शाक्ति को, प्रकाश को। तो आत्मा के अन्तर तेज हो जाता है तब आत्मा वहां जाती है। यह तो है हमारी आत्मा। इस अपनी आत्मा का अनुभव करके जहां से यह आत्मा आई हुई है, उस लोक का जब हम अनुभव करते हैं तो कितना ही बड़ा होता है। वह जो पारब्रह्म का लोक है वह कितना होगा, आदमी अनुमान लगा ले। यदि आदमी अधिक अभ्यास करे तो टेलीविजिन के नियम के अनुसार उसकी सुरत और उसकी आत्मा का सम्बन्ध उस परमात्मा से हो जाता है। किसी को मालूम हो या न हो यह उस परमात्मा से हो जाता है। किसी को मालूम हो या न हो यह और बात है। जैसे मेरे अन्तर साँस चलता है जब मेरा सांस बाहर निकलता है तो मेरे सांस का सम्बन्ध बाहर की वायु से हो जाता है। मेरे अन्तर जितना पानी है उसका सम्बन्ध बाहर के पानी से हो जाता है, इसी तरह हमारी आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है।

हंस अखाड़ा लीला चौक।

भक्त मंडली खेलें थोक।।

यह अनुमान है और यह ठीक है। स्वामीजी का साधन बहुत उच्चकोटि का था। मुझ से कहीं अधिक था। उन्होंने १३ वर्ष अपने मकान में बन्द रहकर साधन किया। जब साधन करते होंगे तो यह स्वाभाविक बात है कि उनकी आत्मा ने उन बड़े परमात्मा से मिलकर उन लोकों को देखा होगा। जैसे आजकल के समय में लोग पहाड़ को खोदते हैं। उसमें तांबा या दूसरी धातुयें निकलती हैं तो वह यह अनुमान लगाते होंगे कि इस पहाड़ में इतने लाख टन कोयला है या इतने लाख टन तांबा या जस्ता है। यह सब अपने अनुभव से कहते हैं और उनका अनुभव ठीक होता है। इसलिये स्वामी जी का अनुभव ठीक है मगर मेरा इतना ऊँचा नहीं जितना स्वामी जी का है मगर मैं यह सच मानता हूँ कि उस पवित्र विभूति ने बहुत अभ्यास किया है। किया तो मैंने भी बहुत मगर मैं नीचे आता रहा। शायद वह भी नीचे आते रहे होंगे यह उनको पता होगा।

लोक अनन्त भक्त जहाँ बसे।

नाम अधार अमी रस रस।।

जिस तरह तुम अन्तर में आत्म आनन्द लेते हो या मैं लेता हूँ। मुझे पता है कि कितना आनन्द है। इसी तरह से वह जो बहुत ही बड़ा पारब्रह्म का लोक है वहां भक्तों की आत्मायें रहती हैं। जब शरीर छूटता है तो वहां चली जाती है, जिस तरह से जब यहां शरीर छूटता है तो दूसरा कलेवर अपनी वासना के अनुसार लेते हैं। हम समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि बच्चा पैदा होता है वह कहता है कि यह मेरा घर नहीं है। मेरा घर अमुक है। वह उस घर को क्यों जाता है क्योंकि उसके मन में उस घर के साथ सम्बन्ध होता है। जिसको यह निश्चय हो चुका है कि मन का सारा खेल माया का है, वह उस लोक में जा सकता है। जब तक यह पूर्ण निश्चय नहीं होता कि यह माया है, है नहीं मगर भासती है वह लाख अभ्यास करे वह उस लोक में नहीं जा सकता। यही शास्त्र कहते हैं कि जब तक मनुष्य उस लोक में नहीं जा सकता। यही शास्त्र कहते हैं कि जब तक मनुष्य माया से परे नहीं जाता वह पारब्रह्म के लोक मैं नहीं जा सकता।

राधास्वामी यह भी गाई।

चौथा परदा लीना जाई।।

वह कहते कि राधास्वामी ने यह गा दिया और चौथे पर्दे का भेद दे दिया।

मैंने अपने जीवन में जो वह बता दिया मगर मेरा कोई दावा नहीं है।

शब्द स्थान पांचवां

पंचम किला तख्त सुल्तानी। बादशाह सच्चा निज जानी।।

चली सुरत देखा मैदाना। अजब शहर अद्भुत चौगाना।।

अमृत कुंड अमी की खाई। महल सुनहरी रचे बनाई।।

चौक चांदनी दीप अनूपा। हंसन शोभा अचरज रूपा।।

षोड़स भान चन्द्र उजियारा। सुरत चढ़ी देखा निज द्वारा।।

द्वापाल जहां बैठे हंस। कहीं कहीं अंस कहीं कहीं बस।।

सहज सुरत तहां वचन सुनाये। कहो भेद तुम यहां कस आये।।

सुरत नवीन कही तब बानी। संत मिले उन कही निशानी।।

इतना कह तब भीतर धंसी। सत्त नाम दर्शन कर हंसी।।

पुहुप मध्य से उठी अवाजा। को तुम हो आये किहि काजा।।

सतगुरु मिले भेद सब दीना। तिनकी कृपा दरस हम लीना।।

दर्शन कर अति कर मगनानी। सत्त पुरुष जब बोले बानी।।

अलख लोक का भेद सुनाया। बल अपना दे सुरत पठाया।।

अलख पुरुष का रूप अनूपा। अगम पुरुष निरखा कुल भूपा।।

देखा अचरज कहा न जाई। क्या क्या शोभा बरनूं भाई।।

तीन पुरुष और तीनों लोक। देखे सुरत और पाया जोग।।

प्रेम विलास जहाँ अतिभारी। राधास्वामी कहत पूकारी।।

जीवन के अन्दर एक खोज थी और अब भी है। किस बात की? इसका कुछ पता नहीं। जानता हूँ उस मन्तव्य को मगर उसका वर्णन नहीं कर सकता। छोटी आयु में मन्तव्य था पेट भरने का, मन की शान्ति का। जीवन में पेट का भरण पोषण चलता रहा, चाहे थोड़ा मिला या बहुत मिला। वह मन्तव्य तो इसलिये पूरा

होता रहा है कि प्रतिमास तनख्वाह लेता रहा। मन की शान्ति केवल इस ख्याल से पूरी हुई कि यह मन है नहीं, मगर भासता है। जो विचार उठते थे वह मुझको तंग करते थे और अपनी ओर खींचते थे। दाता दयाल ने गुरु पदवी देकर दया कर दी। जब से यह ख्याल आया कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता और जो कुछ किसी के अन्तर पैदा होता है अच्छा या बुरा अथवा जो मेरे अन्तर पैदा होता है यह सब मन का खेल है प्रकृति है। तो मन की शान्ति तो इस तरह मिल गई मगर मेरे अन्तर कुछ और चीज भी है जो मन में रहती हुई थी। फिर वह फसाव तो समाप्त हो गया मगर वह किसी और वस्तु को ढूँढती थी। आगे आया प्रकाश वह प्रकाश को देखती है, प्रकाश में ठहरती है, उस प्रकाश का आनन्द लेती है। यह वह अवस्था है जिसे कल मैंने चौथी श्रेणी में वर्णन किया था आत्मपद। अब जो वस्तु प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है, मैं उसकी खोज करता हूँ। वह क्या है? इसलिये मैंने कहा था कि मुझे खोज है। उस वस्तु की खोज के सिलसिले में यह अनुभव हो गया कि मैं न देह हूँ, न मन हूं। प्रकाश को देखा तो उसमें आनन्द लिया। उसको सोहंग गति कहते हैं। उस गति से मनुष्य भंवर गुफा में चलता रहता है। सुरत नीचे को जाती रहती है। परन्तु मुझे यह ज्ञान हो चुका है कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। यह सब मन का खेल है और माया है। मुझे चूंकि अपने घर जाने की खोज है, उस मेरे प्रकाश से धार फूटती है जिसको मैं देखता हूँ। वह मेरी सुरत उस धार के साथ नीचे की ओर आती है। वह साधन के समय नीचे नहीं आती किन्तु ऊपर चली जाती है। उसका नीचे आना और उसके रुक के फिर ऊपर जाना, आना और फिर प्रकाश में ठहरना उस अवस्था का नाम है भँवर गुफा। उसका वर्णन मैंने कर दिया। आज पांचवी श्रेणी या स्थान का वर्णन करता हूँ। क्यों! कुछ इसका लाभ? क्या मैं नहीं जानता कि दुनियाँ को इस ज्ञान की आवश्यता नहीं है? कुछ तो मेरा कर्म भोग कुछ गुरु ऋण मगर मैं यह दावा नहीं करता कि मैं जो कुछ कहता हूं वह ठीक है क्योंकि इन वाणियों को मैंने बहुत पढ़ा। ख्याल आता है कि जो इस तरह की किताबें पढ़ते हैं वह पागल न हो जायें और सच्चाई को समझें। जो असलियत और सच्चाई मैंने समझी है उसका दावा नहीं करता मगर उसका पूर्ण विश्वास मुझको हो गया है। जिस सुरत को यह विश्वास हो जाता है कि मैं उस प्रकाश की साक्षी हूँ और वह

आगे जाना चाहती है तो देह व मन की ओर ध्यान वह प्रकाश में ही चलेगा। वह प्रकाश में आगे ढूंढने चलेगा। किसको? उस वस्तु को जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है या वह उसको अपना आपा कह देगा। अपने आप की खोज करेगा मगर मैं अपना आपा नहीं कहता, क्यों? क्योंकि यह जितना खेल है यह देह में रहते हुये है। यहां तो लाखों करोड़ों मनुष्य हैं, करोडों भूमि है, करोड़ों लोक लोकान्तर है। बनते और बिगड़ते रहते हैं उनका भी कोई आधार है। यह साइंस का युग है। कल श्री दुर्गादास ने चंडीगढ़ से समाचार पत्र की एक कटिंग (कटा हुआ टुकड़ा) भेजा है। उसमें लिखा हुआ है कि विलायत में २१-८-७० को सूर्य विशेषज्ञों की मीटिंग में एक प्रोफेसर ने जिसका नाम प्रो० जैडनैकोपल है बताया कि उसने एक नई भूमि बनी हुई देखी है। वह कहता है कि उसे कैसे ज्ञात हुआ। वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि चन्द्रमा से परे एक भारी रिंग है। उसके बीच में से गर्मी निकलती है। उस गर्मी को वह अपने यंत्रों से नाप लेते हैं। उसका ताप क्रम ५००डिग्री कम हो गया है। इस ताप क्रम की कमी के कारण ज्ञात करने पर प्रो० जैडनैकोपल ने यह बताया कि जो कभी गर्मी में आई है वह कमी एक और भूमि का लोक बना रही है। इस प्रकार की वर्तमान साइंस को देखते हुये मुझे यह साहस नहीं होता कि मैं उस मालिक को आपा कहूं। वेदान्तियों और धर्मावलम्बियों का कथन है कि यह जो कुछ है मनुष्य का अपना ही आपा है। वह तो बेअन्त है। वह एक परम शक्ति है।

जिस रिंग को वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है वह तो इस स्थूल सृष्टि को बनाने वाला है। वह यह भूमि, तारागण और नक्षत्र बनाता है। वह जो मालिक है वह इतने बड़े सूक्ष्म प्रकृति के लोक बनाता है उसे यह रिंग या ज्योति स्वरूप समझ लो, प्रकाश का एक भंडार समझ लो। यह स्थूल सृष्टि को बनाता है। इसी तरह वह जो बड़ा मालिक है बेअन्त है। उसका खेल कितना होगा! अनुभव कहता है कि यह जो कुछ मैंने देखा है यह अपने शरीर में रहते हुए देखा है। कई बार सोचता हूँ कि यह जो कुछ तुमने देखा या राधास्वामी दयाल ने देखा या गुरु नानक साहब ने देखा, क्या सचमुच देखा या बुद्धि की काट छांट करके तुकबन्दी की हुई है। यह तुकबन्दी नहीं। हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों से इस दुनिया में क्या कुछ मालूम नहीं

करते! मनुष्य ने ज्ञानेन्द्रियों से इतना ज्ञान प्राप्त किया है कि जिसकी कोई गणना नहीं। इसी प्रकार आत्मा ने इस पारब्रह्म देश का। जिस तरह मनुष्य की आत्मा उस पारब्रह्म को देखती है, परखती है, पहिचानती है और जानती है वैसे ही वैज्ञानिक अपनी कर्मेन्द्रियों से इस स्थूल या भौतिक जगत का हाल मालूम करते हैं। वहां आत्मा जाती है जिसका वर्णन चौथे पद में किया है। अनन्त दी में भक्त जन रहते हैं। भक्तों की आत्मायें दायें बायें रहती हैं। मैं इसको सत मानता हूँ। इसका प्रमाण मैंने दे दिया। आज मैं इसी अभ्यास में था।

पंचम किला तख्त सुल्तानी।

बादशाह सच्चा निज जानी।।

पंचम किला क्या है यह स्वामीजी को पता होगा। मैं यह समझता हूँ कि जब सुरत प्रकाश में रहती है और भँवर गुफा में ठहरती है अर्थात आत्मा अपनी सत्ता को लेकर वहाँ ठहरती है तब उसके अन्तर में जो सुरत रहने वाली है वह सोचती है कि प्रकाश को देखती हुई आगे देखूँ कि क्या है? जब वह आगे चलती है तो वह विराट, अव्याकृत और हिरण्यगर्भ को बिल्कुल भूल जाती है कि माया भी कोई है। काल है हमारे अन्तर आत्मा का वह प्रकाश जिसके अन्तर से वृति निकलती है नीचे की रचना करने के लिये। जब ज्ञान हो जाता है जैसे मुझको हुआ कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता तो फिर वह आगे चलती है। आगे क्या है? सफेद रंग का प्रकाश ही प्रकाश है। मैं यह प्रकाश अपनी सुरत से देखता हूँ।

सेत सिंहासन क्षत्र बिराजे।

अनहद शब्द गैव धुन गाजै।।

वह प्रकाश ही प्रकाश है। संत उस प्रकाश के बड़े भण्डार को शायद पंचम किला कहते हों। मैंने जो देखा है वह कहता हूँ। जब सुरत वहाँ चली जाती है तो वहां से वह उस माया और काल देश के शारीरिक और मानसिक मान बोध की जो धारें प्रकाश से निकल कर नीचे आती हैं वह उनको भी छोड़ जाती है। फिर क्या होता है?

सुरत चली देखा मैदाना।

अजब शहर अद्भुत चौगाना।।

अमृत कुंड अमी की खाई।

महल सुनहरी रचे बनाई।।

मैंने पहिले भी कहा है कि किसी अवस्था, किसी भाव या किसी दशा को वर्णन करने के लिये इस माया के देश में तरह–तरह के शब्द गढ़ें हुये हैं अच्छी वस्तु के दर्शन के लिये सुन्दर शब्द प्रयोग किये और बुरी वस्तु के वर्णन के लिये दूसरे शब्द गढ़ लिये। मैं वहां पर प्रकाश का ही मैदान देखा करता हूँ। उस प्रकाश के देश या मैदान को वर्णन करने के लिये या उस दृश्य को वर्णन करने के लिये मेरी समझ में स्वामीजी ने सुनहरी महल चौगाना प्रयोग किये हैं। वहां न कोई घास होती है और न ईंटों के महल होते हैं। उस अवस्था को वर्णन करने के लिये माया देश की वाणी प्रयोग की गई है।

चौक चाँदनी दीप अनूपा।

हंस न शोभा अचरज रूपा।।

पता नहीं स्वामीजी का क्या भाव है। वहां सफेद रंग के प्रकाश के अणु हैं। इतने सफेद कि जिसको शब्द सफेद भी पूरी तरह प्रगट नहीं कर सकता। वह लोक है। अनुभव कहता है कि वह अनन्त प्रकाश का भण्डार है जिस तरह वैज्ञानिकों ने मालूम किया है कि वह रिंग अत्यन्त बड़ा है इसी तरह सन्तों ने उस सफेद रंग के प्रकाश के भण्डार को सतलोक कहा है।

षोड़स भान चन्द्र उजियारा।

सुरत चढ़ी देखा निज द्वारा।।

ऐ राधास्वामी दयाल! मैं क्षमा चाहता हूँ। मैं नकटा बनकर हां में हां नहीं मिला रहा हूं। दातादयाल ने जब आपकी शिक्षा मुझको दी थी तो कहा था–

जब लग देखो न अपने नैना।

तब लग मानो न गुरु के बैना।।

इसलिये मैं वह कहता हूँ जिसको मैंने अनुभव किया है। ऐ राधास्वामी दयाल मैं आपकी बात पर विश्वास करता हूँ मगर इससे अधिक विश्वास होता नहीं। मेरा अनुभव है कि वह देश प्रकाश का भण्डार है। चूंकि इस दशा में जाकर

वह जो निचले प्रकाश, मन और स्थूल प्रकृति का जीवन था वह नाशवान सिद्ध हुआ क्योंकि उसको छोड़ जाता हूँ। इसलिये सुरत का जो अपना अनुभव है अपनी सुरत का जो आनन्द है मैं उसको अमृत कहता हूँ। अमृत वह वस्तु है जिसके पीने से मनुष्य सदा के लिये अमर हो जाता है।

स्वामीजी ने सोलह सूर्य या सोलह चन्द्र गिने होंगे। मैंने अलग अलग नहीं गिने। सुरत के अन्तर जो १६ प्रकार की चेतनतायें हैं जो इस शरीर में प्रगट होकर १६ कलां कहलाती है– पांच कर्मेन्द्रियां, पाँच ज्ञानेन्द्रियां, अन्त करण चतुष्ठय प्रकृति और आत्मा यह सोलह हैं। इनकी चेतनता का जो भान होता है उस प्रकाश के अन्तर मैं वह १६ प्रकार के सूर्य और चन्द्रमा समझता हूँ।

षोढ़स भान चन्द्र उजियार।
सुरत चढ़ी देखा निज द्वार।।

सुरत को इस शरीर में रहते हुए उन भान बोध का कितना आनन्द होता है तो वह तुम स्वयं सोचो कि कितना भारी आनन्द होगा ! वहाँ इन १६ चेतनताओं का कारण स्वरूप में कितना अधिक प्रभाव होगा ! जिसमें सुरत प्रवेश करती है वह है दरवाजा।

द्वार पाल जहां बैठे हंस।
कहीं कहीं अंस कहीं कहीं वंस।।

स्वामीजी का क्या भाव है मुझे पता नहीं। जो मैं समझता हूँ वह कहता हूं। जब तुम अपने अन्तर मन में होते हो तो तुम्हारे अन्दर स्वयं ही सवाल पैदा होता है और तुम्हारे अन्तर में ही कोई दूसरी शक्ति जवाब देती है। पहिले तो मैं समझा करता था कि कोई बाहर की शक्ति आकर उत्तर देती है। अब जब तुम लोगों ने कहा कि मैं तुम्हारे अन्तर आवाज देता हूँ जैसे यह रामसेवक ग्वालियर का बैठा हुआ है। वह कहता है कि ८ वर्ष हुये उसने किसी बीमार को दवा दी। उसको ठीक नहीं बैठी। वह बीमार अमीर आदमी था। मैं घबराया और प्रार्थना करने लगा राम से या मालिक से कि मेरी इज्जत रख लो। यदि यह मर गया तो मैं क्या करूँगा। यह कहता है कि उस समय उसके अन्तर प्रकाश हुआ और मेरा रूप प्रगट हुआ। उस

रूप ने दवा दी और इंजेक्शन बताये और वह रात के 12 बजे रोगी के पास गया और दवा दी। रोगी ठीक हो गया। अब चूंकि मैं उसके अन्तर नहीं गया था इसलिये इन अनुभवों ने मुझको विश्वास करा दिया कि उसको उत्तर देने वाला उसका ही मन था। ऐसे ही जब सुरत वहाँ जाती है तो उसके अपने ही अन्तर से यह भाव उठता है। वह सवाल करते हैं कि तुम यहां कैसे आये?

सहज सुरत तहां वचन सुनाये।
कहो भेद तुम यहां कस आये।।

वह जो सवाल करने वाला नई सुरत से है जो वहां गई है वह कौन है? मैं इस अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि वह सुरत का अपना ही भाव है। क्यों? क्योंकि वह इस ख्याल को लेकर मृत्युलोक से ऊपर को अभ्यास करने गई थी। वह संस्कार उस सुरत के ऊपर थे। बाहर के गुरु ने भेद बताया हुआ था। इसलिये इस अवस्था का वर्णन सवाल व जवाब के रूप में मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार स्वामी जी ने किया है। तुम देखो इस दुनियाँ में हम रहते हैं। जिस प्रकार के हमारे भाव आशायें और भावनाओं होती हैं उन्हीं भावनाओं के अनुसार अपना इष्ट बन जाता है या हम बनाते है। उदाहरण रूप से गुरु गोविन्द सिंह जी थे। वह तो गुरु नानक के घराने के अनुयायी (पैरोकार) थे। जब उनको देश को अत्याचार से बचाने का ख्याल पैदा हुआ तो शक्ति का प्रयोग करने की आवश्यकता पड़ी। जब उन्होंने साधन किया तो उनके अन्तर गुरु नानक साहब या गुरु अर्जुन देव नहीं आये किन्तु उनके अन्तर शक्ति भगवती आई क्योंकि गुरु गोंविन्द सिंह जी के अन्दर शक्ति की आवश्यकता थी और उनके अपने ही ख्याल ने उनको तलवार दी, जिस तरह इस रामसेवक के अन्तर जो रूप प्रगट हुआ उसने बीमारी के इलाज की दवा बताई। इसलिये जैसी–जैसी जिसकी आशायें होती हैं। उनका इष्ट वैसा ही करने के लिये विवश है। तब ही तो मैं कहा करता हूँ कि जितनी प्रबल तुम्हारी इच्छा है उतना ही उतना प्रबल प्रबन्ध कुदरत ने तुम्हारी चाह को पूरा करने का किया हुआ है। बुरी है तो बुरी और यदि अच्छी है तो अच्छी। बुराई और भलाई का सम्बन्ध हमारी बुद्धि से है। इसलिये जिनको वहाँ जाने की आवश्यकता है उनको स्वाभाविक ही सतगुरु मिला करते हैं। जैसे मुझको मिले। मैं तो दातादयाल महर्षि

शिवब्रतलालजी को जानता तक नहीं था। इसलिये तुम्हारी वासना के अनुसार कुदरत स्वयं तुम्हारी सहायता करेगी, जिस तरह इस रामसेवक ने पुकार की, कि हे राम ! उस आदमी को बचाओ। वो उस शक्ति ने मेरा रूप धर इसको दवा बताई। मुझे लालसा थी अपने घर जाने की और मालिक से मिलने की। तो कुदरत ने दातादयाल का रूप धर कर मुझे बुलाया। इस सिद्धान्त के अनुसार जो कुछ इस पंचम किले में लिखा है उसे पढ़ो–

सहज सुरत तहां वचन सुनाये।

कहो भेद तुम कस आये।।

किसी दूसरी सुरत ने उसको नहीं कहा। यह उसके अपने भाव थे। उसका वर्णन इस ढंग से किया गया है।

सुरत नवीन कही तब बानी।

सन्त मिले उन कही निशानी।।

यह जितनी वाणी है उसका समझना महा कठिन है। सन्त की वाणी को केवल सन्त ही समझ सकते हैं दूसरा नहीं। अब मैं कैसे मान लूं। मैं भी सत लोक में जाता हूं मगर पता नहीं जाता हूँ कि नहीं जाता हूं। सन्तों का सत लोक शायद कोई और हो, तो जितने प्रश्नोत्तर होते हैं जैसे रामसेवक का उदाहरण दिया वैसा ही सुरत के अन्दर जो उसका अपना ही सुरतपना है वही इससे प्रश्नोत्तर करता है–

इतना कह तब भीतर धँसी।

सत्तनाम दर्शन कर हँसी।।

सत्तनाम का दर्शन करके हँसी। सतनाम क्या है? सफेद रंग का प्रकाश। उस प्रकाश के अन्दर जो गति हुई उसको कहते हैं नाम। आवाज तब होगी जब कहीं गति होगी। यह साइंस का सिद्धान्त है बिना गति के आवाज नहीं होती है। तुम्हारे कान सुनें या न सुन सकें, यह दूसरी बात है। तो वह जो नाम है उसको सुनकर हँसी। हँसी के अर्थ हैं आनन्द के, प्रसन्नता के। सुरत आनन्द में आगई। मैं ऐसा ही समझता हूँ।

पुरुष मध्य से उठी आवाज।

को तुम हो आये किहि काज।।

यह भी वही बात है। पुहुप फूल को कहते हैं। फूल क्या है? सुरत का अपना ही रूप है। उसके अन्तर से ही सुरत कहती है। मैं अपने आपसे पूछता हूँ तेरे अन्तर कुरेद है। सुरत कुछ चाहती है। वह क्या चाहती है? वह अपने अस्तित्व को मिटा देना चाहती है। क्यों? क्योंकि जिस तरह तुम शरीर में रहते हुये सारा दिन काम करते हो, तुम गहरी नींद में जाकर शरीर को भूलने की कुदरती इच्छा करते हो। तुम में शरीर को भूलने की कुदरती इच्छा रहती है। तुम में शरीर को भूलने की प्रबल इच्छा रहती है यदि रात को तुमको नींद न आये तो बेचैन हो जाओ। इसी प्रकार यह सुरत जो मन में रहती है वह यह खेल कर लेती है तो मन को भूलना चाहती है। इसी तरह वह सुरत जो प्रकाश में रहती है वह उस प्रकाश को या आत्मस्वरूप को भी भूलना चाहती है। मनुष्य के अन्दर यह स्वाभाविक भावना है। (It is but a natural craving in a man) मैंने कहा था कि अब भी मेरी कुरेद बाकी है। वह कुरेद क्या है? मैं अपनी सुरत को और उसके सुरतपने को भूल जाना चाहता हूँ।

सतगुरु मिले भेद सब दीना।

तिनकी कृपा दर्श हम लीना।।

तो पुहप से जो आवाज आती है वह सुरत की आवाज है। शब्द प्रगट होता है। आज रात को मैं केवल शब्द ही सुनता रहा। सुबह भी अभ्यास में चला गया। वहां क्या था? वहां न प्रकाश था, न मन था, न शरीर था, न दातादयाल का रुप था। न वहां राधास्वामी नाम था और न कुछ चेतना थी। वहाँ केवल शब्द है। अब मैं कोशिश करता हूँ। कि वह वस्तु जो शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है वहां जाऊँ। इसलिये मैंने कहा कि जीवन में एक कुरेद थी या खोज थी। क्या खोज थी? सब कुछ भूलना चाहता हूँ। कोई संसार के दुखों से दुखी होता है। वह यदि दूसरी तरह नहीं भूल सकता तो शराब पी लेता है। दातादयाल का एक शब्द है :–

पिलादे भक्ति का ऐसा प्याला, ममत्व मैं अपने तन का खोदूँ।

न बुद्धि रहे न सुधि रहे कुछ अहमपना सारा मन का खोदूँ।।

जपूं तपूं और भजूं न सुमिरूँ, न योग युक्ति के पंथ दौडूं।

न नाम की माला हाथ में हो, हिये की माला का मनका खोदूँ।।

वैराग क्या जिसमें राम आये, वह त्याग क्या त्याग में फँसाये।

न बन्धु और मुक्ति का हो खटका, विवेक घर और वन का खोदूँ।।

न दुख की दुविधा न सुख की चिन्ता, न चित की दुचिता का भय हो किंचित।

न ज्ञान और ध्यान की हो इच्छा, विचार साधन यतन का खोदूँ।।

न द्वन्द और निर्द्वन्द का हो झगड़ा, नद्वैत अद्वैत का बखेड़ा।

झुका के सर राधास्वामी पद में, विचार दासपन तक का खोदूँ।।

अब तुम देखो कि वह मेरे अन्दर क्या कुरेद है जिसको मैं भूलना चाहता हूँ या मेरी सुरत भूलना चाहती है। तब ही तो मैंने कहा कि मेरे अन्तर कुरेद थी और अब भी है इतना ऊँचा आने पर भी। अभ्यास में शब्द को सुनता हूँ। आज सिवाय शब्द के और कुछ नहीं था। न प्रकाश था। वह जो केवल शब्द था वह है नाम।

दर्शन कर अतिकर मगनानी।

सत्त पुरुष तब बोले बानी।

अलख लोक का भेद लखाया।

बल अपना दे सुरत पठाया।।

तो सत लोक है सफेद रंग का प्रकाश। यदि मैं वहां न जाता तो आगे नहीं जा सकता था। जिस तरह दसवें द्वार से मुझको बल मिल गया गुरु के ज्ञान का तो मैं दसवें द्वार को छोड़कर आत्म पद में चला गया। आत्मा के प्रकाश का बल लेकर फिर मैं सब कुछ भूलकर सतलोक में चला गया। जब प्रकाश में गया तो आगे शब्द आया। वह जो शब्द का बल था उसने मुझे वहां पहुँचाया। वह कहते हैं सतपुरुष ने उसको बल दिया।

अलख लोक का भेद बताया।

बल अपना दे सुरत पठाया।।

स्वामीजी का क्या भाव है यह उनको ज्ञात होगा। मुझे क्या भेद मिला? मुझे यह विश्वास हो गया कि प्रकाश को देखने वाली और कोई वस्तु है और

प्रकाश कोई और वस्तु है। जब से मेरे अन्तर यह अनुभव हुआ तो मैंने विवश होकर अलख लोक में जाने की कोशिश की। अलख में लखा कुछ नहीं जाता। अलख उसी को कहते हैं जो लखा न जाये। प्रकाश तो लखा जा सकता है। अलख में प्रकाश नहीं है केवल शब्द है जिसका वर्णन मैंने आपसे किया कि मैं रात को सुनता रहा।

अलख पुरुष का रूप अनूप।

अगम पुरुष निरखा कुल भूपा।।

वह अगम पुरुष क्या है स्वामीजी को पता होगा। मेरी ८३ वर्ष की आयु इसी खबत में बीत गई। वह अगम लोक है केवल शब्द। इससे आगे अभी तक मुझसे जाया नहीं जाता। अगम के आगे अनुभव है। जानता हूँ कि मेरे अन्तर कोई वस्तु है जो शब्द को सुनता है। वह क्या है? उसका मुझे पता नहीं। स्वामीजी को पता लग गया होगा। अनुभव से उन्होंने कह दिया होगा वह सच्चा मालिक अकह अगाध, अनामी है। न वहां शब्द है, न प्रकाश। वहां क्या है क्या नहीं, बस गूंगे का गुड़ है।

देखा अचरज कहा न जाई।

क्या क्या शोभा वरनू भाई।।

उस अनुभव को कैसे वर्णन कर सकते हो। कहने में तो आता नहीं। जैसे तुम्हारा काम भोग का विषय है। क्या तुम उनको कह सकते हो। गुड खाओ। गुड़ के स्वाद को क्या तुम वर्णन कर सकते हो। वर्णन करने की तुम में शक्ति नहीं। सैन बैन ही करोगे या जिसने गुड़ खाया हुआ है उसको पता लगेगा कि उसका स्वाद क्या है। बिना खाये स्वाद का क्या पता। एक नौजवान है जिसने काम को नहीं भोगा। यदि तुम उसको काम का लुत्फ बताओ तो वह नहीं समझ सकता। इसलिये–

यह करनी का भेद है नाहीं बुद्धि विचार।

कथनी तज करनी करे, तब पावै कुछ सार।।

तीन पुरुष और तीनों लोक।

देखे सूरत पाया जोग।।

इस शरीर में रहते हुए इस खोज को समाप्त करने के लिये सिवाय अन्तिम श्रेणी के जहां मैं शब्द सुनता हूँ उससे आगे मुझसे जाया नहीं जाता। यह तीन ही लोक है। तुम्हारी सुरत का शरीर है वह प्रकाश ही प्रकाश है। तुम्हारी सुरत का जो मन है वह अलख है और जो आत्मा है वह अगम है। यह तीन लोक है जहां जाकर इस दुनियां के सब झंझट समाप्त हो जाते हैं ! मन के और प्रकाश के झगड़े समाप्त हो जाते हैं। काश यदि कुदरत मुझे अवसर दे कि जब मैं शरीर छोडूं तो वर्णन कर सकूं कि मैं कहाँ जा रहा हूँ।

प्रेम विलास जहां अति भारी।

राधास्वामी कहत पुकारी।।

प्रेम मिला। तुम बाहर किसी मित्र को मिलते हो। स्त्री, पुरुष मिलते हैं। मां बच्चे से मिलती है। मन के अन्तर गुरु स्वरूप आता है उससे प्रेम करते हो। हमारी सुरत प्रकाश से मिलती है उससे प्रेम करती है। हमारी सुरत शब्द को सुनती है उसमें रहती है उससे प्रेम करती है। तो सबसे बड़ा विलास जो है वह सुरत को शब्द